(गीताञ्जली धारा... 18)

अनुभव-गीताञ्जली

(लक्ष्य, साधना व अनुभव)

(शिक्षा-दीक्षा-पदवीदाता गुरु, सान्निध्य 18 वर्ष तक)

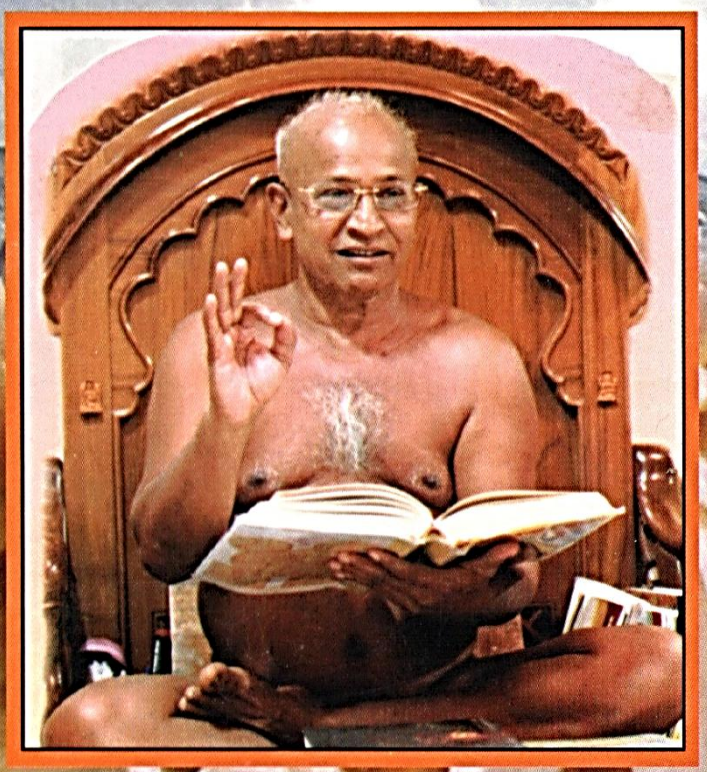

(आचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव)

वन्द्य चरण जिनके ऽऽऽ
जिनके चरणे नतमस्तक है....कनकनन्दी मन/(भाव) से ऽऽऽ (टेक)

सूरी कुन्थुसागर गुरुवर... मोक्षमार्ग प्रदाता सूरीवर...
शिक्षा-दीक्षा दातार... दयालु मुनिवर... वन्द्य चरण

गुरुचरण सेवक - आचार्य कनकनन्दी

(चारों अनुयोग की प्रमुख ज्ञानदात्री - ज्ञानदान - 7 वर्ष तक)

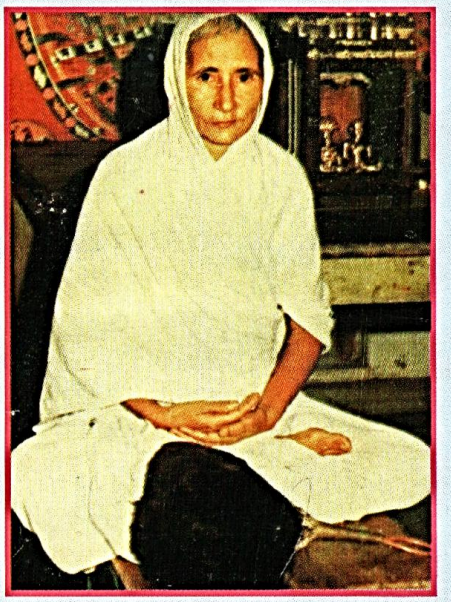

गणिनी आर्यिका विदुषीरत्न सम्यग्ज्ञान शिरोमणी धर्म प्रभाविका
श्री विजयमती माताजी

विजयमती मम ज्ञान प्रदात्री ... प्रमुख शिक्षादायिनी सती...
अनुयोग चारों की... ज्ञानदायी गणिनी...उपकृत उनसे

(साधु संघों को स्वाध्याय कराते हुए आ. कनकनन्दी-2008)

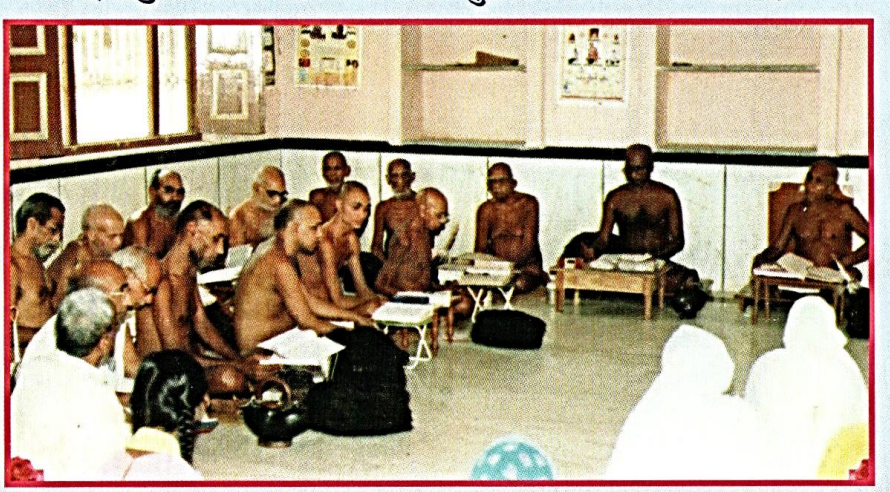

त्रयकालवर्ती पञ्चगुरुवर...रत्नत्रय युत श्रेष्ठ गुरुवर...
'कनकनन्दी' वन्दे...पदकमल जिनके...वन्द्य चरण...

गीताञ्जली धारा.....18

अनुभव-गीताञ्जली

(लक्ष्य साधना व अनुभव)

आचार्य कनकनन्दी

पुण्य स्मरण

आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के 33वें दीक्षा जयन्ती के पुण्य स्मरणार्थे- आध्यात्मिक गुरुवृन्द यथा-आ. कुन्थुसागर जी, आ. विमलसागर जी, आ. भरतसागर जी, आ. देशभूषण जी, आ. विद्यानन्द जी, आ. अभिनन्दनसागर जी व गणिनी श्रमणी विजयमती माताजी को समर्पित

द्रव्यदाता

1. श्रीमती संगीता देवी अजय कुमार जैन (सुपुत्र ब्र. श्रेणिक, कुमारी श्रुति जैन, नागपुर (महा.)
श्रीमती श्वेता योगेन्द्र कुमार, कु. तृप्ति, अनुराग जैन
2. पुष्पा देवी W/o स्व. धनराजजी पन्नालालजी चीतरी
शिल्पा W/o भरतकुमारजी, टीना W/o मणिभद्र (पुत्रवधु पुत्र)

ग्रंथांक -216 प्रतियाँ-1000
संस्करण -2013 मूल्य-101 रु.

प्राप्ति स्थान

धर्म-दर्शन सेवा संस्थान, द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा,
चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001, मो. 9783216418

सम्पर्क सूत्र

डॉ. नारायणलाल कछारा, सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान,
55, रवीन्द्र नगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422, मो. 9214460622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

मेरे (आ. कनकनन्दी) आध्यात्म गुरुओं की वन्दना

-आचार्य कनकनन्दी

चाल : ज्योति कलश छलके...

वन्द्य चरण जिनकेऽऽऽ

जिनके चरणे नतमस्तक है...कनकनन्दी मन/(भाव) सेऽऽऽ (टेक)

सूरी कुन्थुसागर गुरुवर...मोक्षमार्ग प्रदाता सूरीवर...

शिक्षा-दीक्षा दातार...दयालु मुनिवर...वन्द्य चरण...

सूरी विमलसागर गुरुवर...मार्गदर्शक आद्य गुरुवर...

ज्ञान-आशीषदाता...वात्सल्य रत्नाकर...वन्द्य चरण...

सूरी भरतसागर गुरुवर...शंका निवारक ज्ञानदातार...

वात्सल्य सहयोगी...कोमल हृदयी...वन्द्य चरण...

देशभूषण आचार्य गुरुवर..."सिद्धान्तचक्री" अनुमोदक...

शिविर-प्रशिक्षणे...नियुक्तिकर्त्ता...वन्द्य चरण...

विद्यानन्द आचार्य गुरुवर...ज्ञानदाता शंका निवारक...

ज्ञान व उपकरण...दातार सूरीवर...उपकृत उनसे...

आचार्य अभिनन्दन गुरुवर...आचार्य पदवी संस्कार दातार...

आचार्य रत्न पदवी...प्रदायक मुनिवर...वन्द्य चरण...

विजयमती मम ज्ञान प्रदात्री...प्रमुख शिक्षादायिनी सती...

अनुयोग चारों की...ज्ञानदायी गणिनी.....उपकृत उनसे

त्रयकालवर्ती पञ्च गुरुवर...रत्नत्रययुत श्रेष्ठ गुरुवर...

'कनकनन्दी' वन्दे...पदकमल जिनके...वन्द्य चरण...

परसाद, दि. 25.3.2013, रात्रि 10.42

आचार्य श्री विद्यानन्द जी का पत्र

आचार्य कनकनन्दी के लिये

उपगूहन-स्थितिकरण वात्सल्य-प्रभावना हेतु-

श्री कुन्दकुन्द भारती ट्रस्ट प्राकृत भाषा भवन
18-बी, इन्स्टीट्यूशन एरिया नई दिल्ली-110067
दूरभाष : 26564510, 26513138 वी.नि. 2534

दिनांक 25.11.2006

''ये व्याख्यान्ति व शास्त्रं ददाति शिक्षादिकञ्च शिष्याणाम्।
कर्मोन्मूलनशक्ता ध्यानरतास्ते साधवो ज्ञेयाः।।'' **-क्रियाकलाप, पृष्ठ 143**

जो न तो व्याख्यान देते हैं, न शास्त्र रचना करते हैं और न ही शिष्यों को शिक्षा आदि देते हैं, ऐसे कर्मों के विनाश में समर्थ ध्यानलीन पुरुषों को साधु जानना चाहिए।

धर्मानुरागी आचार्यश्री कनकनन्दी जी,

प्रति वन्दना! आशा है आपका रत्नत्रय वृद्धिगत होगा। आचार्य भरतसागर जी मुनिराज को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। वे लगभग दो वर्ष तक मेरे साथ रहे थे। वे बहुत ही शांत स्वभावी और सरल हृदयी थे। कभी किसी को कोई अपशब्द नहीं कहते थे। सच्चे साधु की भाँति उनकी वाणी पर हमेशा सत्य महाव्रत, भाषा समिति और वचनगुप्ति की लगाम होती थी। फिर भी आज जो लोग उनके बारे में और उनकी समाधि के बारे में मिथ्या बोल रहे हैं, उनकी वाणी सर्वथा अनर्गल है, बेलगाम है, शास्त्र सम्मत नहीं है।

अतः मेरा आपसे यही कहना है कि आप शान्ति रखें। यह कलियुग है, इसमें कलहपाहुड के उपदेश बहुत मिल रहे हैं। क्या करें, इसमें ऐसा ही चलता है। आप तो बहुत सज्जन है और अत्यधिक अध्ययनशील हैं। आप बहुत तोल-मोल कर ही हर शब्द बोलते हैं। आपकी अध्ययनशीलता को तो आज हमारे सर्व साधुओं को अनुकरण करना चाहिये। आपको स्मरण होगा कि श्रवणबेलगोला (1981) में आपको एक माह तक तेज बुखार रहा था और मैंने आपकी सेवा की थी। साधुओं में इस प्रकार का हार्दिक वात्सल्य ही होना चाहिए, ईर्ष्या-द्वेष-मत्सर नहीं। पारस्परिक द्वेष अज्ञानता और दुर्जनता का सूचक है।

आपश्री का विश्वासु
आचार्य विद्यानन्द मुनि

आचार्य कनकनन्दी की आध्यात्मिक यात्रा

(आचार्यश्री की आध्यात्मिक क्रान्ति एवं विश्वशान्ति)

1. **मार्ग निर्देशक एवं शिक्षा गुरु :** प.पू. वात्सल्य **आचार्यश्री विमलसागर जी गुरुदेव** एवं प.पू. मर्यादा शिष्योत्तम, प्रशान्तमूर्ति **आचार्यश्री भरतसागर जी गुरुदेव।**
2. **दीक्षा एवं शिक्षा गुरु :** प.पू. गणाधिपति गणधराचार्य, वात्सल्य रत्नाकर आचार्य **गुरुवर श्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव।**
3. **प्रमुख शिक्षा गुरु :** प.पू. गणिनी **आर्यिका विजयमती जी माताजी, आचार्यश्री विद्यानन्दजी** (कुन्दकुन्द भारती, दिल्ली), पं. शेखरचन्दजी शास्त्री (ईसरी), पं. परमानन्द जी शास्त्री (शाहगढ़), पं. श्रेयांसकुमारजी दिवाकर (सिवनी पं. सुमेरचन्द्रजी दिवाकर के अनुज), पं. प्रभाकरजी शास्त्री (श्रवणबेलगोला), श्री नागराजैया (हासन, कर्नाटक)। वैसे भी आचार्यश्री तीसरी कक्षा से ही अध्यापन कार्य कर रहे हैं, विशेषतः 1981 तक आचार्यश्री ने विभिन्न विधाओं का अध्ययन विभिन्न गुरुओं से किया है एवं कर रहे हैं किन्तु विशेषतः 1982 से विभिन्न विधाओं का अध्यापन कार्य कर रहे हैं और आगे भी करेंगे। प्रायः 1988 से विशेषतः शोधपूर्ण अध्ययन-लेखन, 1990 से वैज्ञानिक चैनलों से शोधपूर्ण ज्ञान कर रहे हैं।
4. **क्षुल्लक दीक्षा :** अतिशय क्षेत्र पपौराजी (टीकमगढ़, म.प्र.) 1978.
5. **श्रमण दीक्षा :** श्रवणबेलगोला-गोम्मटेश्वर, 5 फरवरी, 1981 (सहस्राब्दी महामस्तकाभिषेक के अवसर पर **आ. विमलसागरजी ससंघ, आ. विद्यानन्दजी ससंघ** आदि प्रायः **200 साधु-साध्वी,** भट्टारक चारुकीर्ति, अनेक विद्वान तथा लाखों श्रद्धालुओं के संगम के अवसर पर।)
6. **उपाध्याय पदवी :** 25 नवम्बर, 1982, हासन (कर्नाटक) (स्व-गुरु आचार्यश्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव ससंघ तथा श्रद्धालुओं के द्वारा) पदवी प्रदान, महोत्सव करीब एक महीना चला। इस कार्यक्रम में अनेक भट्टारक भी उपस्थित रहे।
7. **सिद्धान्त चक्रवर्ती पदवी :** 1985, शमनेवाड़ी (कर्नाटक) (उपाध्याय कनकनन्दी द्वारा धवला वाचना से प्रभावित होकर **आचार्य कुन्थुसागर जी स्वसंघ, आचार्य देशभूषण जी** ससंघ तथा 15 से 20,000 श्रद्धालुओं के द्वारा त्रिलोक तिलक विधान के अवसर पर।)
8. **एलाचार्य :** 1988, आरा (बिहार) अनेक मुनि दीक्षा के अवसर पर (स्वगुरु आचार्य

श्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव स्वसंघ (प्रायः 35 साधु-साध्वी) तथा श्रद्धालुओं के द्वारा।)

9. **विश्व धर्म प्रभाकर :** 1991 के प्रारम्भ में, दिल्ली (भारत की राजधानी) (स्वगुरु आचार्यश्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव स्वसंघ, **उपाध्याय श्री आनन्दसागर** जी 'मौनप्रिय' तथा 10-12,000 श्रद्धालुओं के द्वारा पञ्चकल्याणक के अवसर पर।)

10. **ज्ञान-विज्ञान दिवाकर :** 1991 के अंत में, रोहतक (हरियाणा) (स्वगुरु आचार्यश्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव स्वसंघ (प्रायः 35 साधु-साध्वी, 4-5,000 श्रद्धालुओं के द्वारा, त्रिलोक तिलक विधान के अवसर पर।))

11. **आचार्य पदवी :** 23 अप्रैल, 1996, उदयपुर (राज.)
(मुनि दीक्षा के अवसर पर, स्वगुरु आचार्यश्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव की 4-5 वर्षों की आज्ञा तथा आदेश पत्र एवं अनेक साधु, समाज के आग्रह के कारण। आचार्य पदवी के संस्कार प्रदाता **आचार्यश्री अभिनन्दसागर** जी गुरुदेव। अनुमोदन एवं सान्निध्य स्वसंघस्थ **आचार्य पद्मनन्दी जी ससंघ**। प्रायः 50-60 साधु-साध्वी तथा प्रायः 30-35,000 श्रद्धालुओं की उपस्थिति तथा अनुमोदना।)

12. **आचार्य रत्न :** 23 अप्रैल, 1996 उदयपुर (राज.)
आचार्य पदवी संस्कार के पावन अवसर पर **आचार्यश्री अभिनन्दनसागर** जी गुरुदेव द्वारा प्रदत्त।

13. **शिक्षण-प्रशिक्षण :** अभी तक आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव से भारत के 13 प्रदेशों के जैन-अजैन लाखों विद्यार्थी, शिक्षक, प्राध्यापक, व्याख्याता, प्राचार्य, प्रोफेसर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, उपकुलपति, वकील, जज, जैन विद्वान् आदि ने शिविर-कक्षा, स्वाध्याय, संगोष्ठी, चर्चा, शंका-समाधान आदि से लाभान्वित हुए है और हो रहे हैं। आचार्य गुरुवर श्री कुन्थुसागर जी स्वसंघ, आचार्य गुरुवर श्री विमलसागर जी संघस्थ, आचार्य गुरुवर श्री अभिनन्दनसागर जी संघस्थ, गणिनी आर्यिका विशुद्धमति माताजी संघस्थ (शिष्या आ. निर्मलसागर जी) साधु-साध्वी तथा अन्यान्य संघस्थ साधु-साध्वी, क्षुल्लक-क्षुल्लिकादि प्रायः 200, आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव से अध्ययन किये हैं और कर रहे हैं। आचार्यश्री विद्यासागर जी गुरुदेव संघस्थ, आचार्यश्री सन्मतिसागर जी गुरुदेव (ज्ञानानन्द) संघस्थ तथा अन्यान्य संघस्थ प्रायः 30-40 ब्रह्मचारी-ब्रह्मचारिणियाँ भी आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव से अध्ययन किये हैं और कर रहे हैं। प्रायः 15-20 दिगम्बर आचार्य-उपाध्याय तथा कुछ श्वेताम्बर साधु भी आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव से ज्ञानार्जन किये हैं और यह प्रक्रिया सतत् प्रवाहमान है।

14. **आचार्यश्री के शिष्यों के द्वारा धर्म प्रचार :** आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के साधु-साध्वी शिष्यों के द्वारा तो भारत में तथा वैज्ञानिक, उपकुलपति प्रोफेसर आदि शिष्यों के द्वारा भारत, भारत के विश्वविद्यालयों, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, जापान, इंग्लैण्ड (यूरोप), नेपाल, श्रीलंका आदि देशों में तथा वहाँ के विश्वविद्यालयों में, विश्वधर्म संसद में धर्म-दर्शन-विज्ञान का प्रचार-प्रसार हो रहा है और यह प्रक्रिया तीव्रता से बढ़ रही है। आचार्यश्री के दि., श्वे. जैन प्रोफेसरादि शिष्य भी दि., श्वे. जैन साधु-साध्वी, विद्वान्, गृहस्थों आदि को भी प्रगतिशील धर्म का अध्यापन करा रहे हैं। आचार्यश्री के ब्र. शिष्य सोहनलाल जी देवड़ा भी अनेक ग्रामों में धर्म-दर्शन-विज्ञान पाठशाला प्रारंभ करके बच्चों से लेकर प्रौढ़ तक को धर्म का संस्कार दे रहे हैं।

15. **आचार्यश्री की पवित्र भावनाएँ एवं महान् योजनाएँ :** स्वात्मोपलब्धि रूप मोक्ष ही आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के सर्वोच्च अंतिम लक्ष्य है। एतदर्थ सत्य-समता-सहिष्णुता-निष्पृहता-व्यापकता-उदारता-एकता-प्रगतिशीलता-वैज्ञानिकता-प्रभावना-शान्ति-निष्पक्षता-न्यायप्रियता-पवित्रता-क्षमा-मृदुता-सहज सरलता-संयम-मौन एकान्तवास रूपी रत्नत्रयमय पवित्र भावनाओं की साधना तथा स्व-पर-विश्व कल्याणार्थ इन भावनाओं का विश्व स्तर पर प्रचार-प्रसार स्थापना की महान् योजनाएँ हैं।

मेरा चार-आयाम सिद्धान्त

भगवान् है मेरा परम-सत्य स्वरूप, सिद्धान्त है स्याद्वाद-अनेकान्त रूप।
सतत साधना है मेरी स्वस्थ-समता, उपलब्धि हो मेरी परम शान्ति रूपा।।

-आचार्य कनकनन्दी का आह्वान-

विज्ञान आंशिक धर्म है किन्तु, धर्म पूर्ण विज्ञान है।

Science is part of religion but religion is absolute science.

विश्व के समस्त जिज्ञासुओं को हमारा सादर आह्वान एवं आमंत्रण है, जो परम सत्य को धार्मिक आस्था, दार्शनिक दृष्टि तथा वैज्ञानिक प्रणाली से परिज्ञान, परिपालन व उपलब्धि करना चाहते हैं, उनके लिए-

You give me co-operation, I shall give you scientific religion.

आप मुझे सहयोग दें, मैं आपको वैज्ञानिक धर्म दूँगा।

श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव

मेरी अन्तःचेतना के संदेश एवं आदेश

(चाल : शत शत वन्दन...)

बार-बार बाल काल से ... मुझे यह संदेश मिलते है।
अन्तः चेतना की गहराई से... यह संदेश मिलते है।। ...(ध्रुव)....
सत्य को जानो स्व को पहचानो... करो अपना ही कल्याण।
राग द्वेष मोह भ्रम त्यागकर... करो विश्व का भी कल्याण।।
स्वयं को आदर्श पहले बनाओ...अन्य को करो बाद में।
निस्पृह एकान्त शान्तभाव से... ध्यान अध्ययन मौन में /(से)।।1।।
ढोंग पाखण्ड रूढ़ि से परे करो... स्व आध्यात्मिक साधना।
ख्याति पूजा लाभ तेरा-मेरा त्यागो... करो समता की साधना।।
त्यागो प्रतिस्पर्द्धा अन्धानुकरण भी... त्यागो समस्त संक्लेश।
आदेश निर्देश दबाव त्याग करो... त्यागो संकल्प विकल्प।।2।।
सामाजिक लन्द फन्द भी त्याग करो... चन्दा-चिट्ठा भी सर्व त्यागो।
भौतिक निर्माण भी त्याग करो... सर्व याचना प्रलोभन त्यागो।।
त्यागो आकर्षण विकर्षण सर्व... अपना पराया भी त्यागो।
आध्यात्म साधना विशुद्धि के द्वारा... संकीर्ण भाव को त्यागो।।3।।
सत्य समता शान्ति साधना से... स्व-अनुभव बढ़ाओ।
भाव-व्यवहार इसी से करो... माध्यस्थ-भाव भी बढ़ाओ।।
स्वप्न शकुन अंगस्फुरन व ... भाव-शकुन के द्वारा।
अनुभव से माध्यस्थ रहकर... भावी को जानो स्व-द्वारा।।4।।
भावी निर्माण भी भाव से होता है... यह भी अंतः संदेश।
आत्मा साधना ही सतत करो... यह है अन्तः आदेश।।
ऐसा ही संदेश सर्वज्ञ ने दिया... जिनवाणी का आदेश है।
इसे ही पालन करता है 'कनक'... की अन्य नहीं है आश।।5।।

प्राक्कथनम्

''अनुभव ही सच्चा ज्ञान अन्यथा विज्ञापन''

(आगमनिष्ठ अनुभवजन्य कविता)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग-आत्मशक्ति से....., तुम दिल की.....)

अनुभव ही है जीव का श्रेष्ठ व ज्येष्ठ गुण,
अनुभव विहीन जीव भी न होगा अस्तित्ववान्।
अनुभव ही है चेतना जिससे चेतता जीव,
दर्शन ज्ञान जिसके भेद जिससे अभेद जीव।।
सम्यग्दृष्टि का ज्ञान तो होता है सम्यग्यज्ञान,
मिथ्यादृष्टि का ज्ञान तो होता है मिथ्याज्ञान।
मतिश्रुतावधिमनः पर्यय तथा केवलज्ञान,
इन्द्रिय मन से जायमान होता है मतिज्ञान।।
मतिज्ञान परे होता है वह है श्रुतज्ञान,
भावश्रुतज्ञान वह है अनुभव पूर्ण ज्ञान।
इसी ज्ञान के बल पर विशुद्ध होता है जब जीव,
अवधि व मनःपर्यय भी सहित होता है जीव।।
सम्पूर्ण विशुद्धि से जीव पाता है केवलज्ञान,
त्रिकालवर्ती ब्रह्माण्ड का होता है सम्पूर्ण ज्ञान।
अनुभवपूर्ण ज्ञान ही होता है सच्चा ज्ञान,
अनुभवहीन ज्ञान तो होता है विज्ञापन/(सूचनाज्ञान)।।
अनुभव के अनन्तर अनावश्यक होता विज्ञापन/(सूचनाज्ञान),
अनुभव न होने पर आवश्यक होता विज्ञापन/(सूचनाज्ञान)।
अनुभव जब होता है सुख-दुःख प्यास व भूख,
विज्ञापन/(सूचना) के बिना भी ज्ञात होता सुख-दुःख।।
बधिर अन्धा मानव यथा जब खाता है मिष्ठान्न,
विज्ञापन बिन अनुभव से समझता है मिष्ठान्न।
अनुभव ज्ञानावरणी का होता जब/(हो जिसका) क्षयोपशम,
उसको विशेष होता है अनुभवजन्य ज्ञान।।
अनुभवज्ञान होता है अति दुर्लभ,

यथा तीर्थंकर होते हैं मानव में भी दुर्लभ।
अल्पश्रुतज्ञान युक्त भी आत्मानुभवी मुनि,
पूर्ण श्रुतज्ञानी देव से भी होते हैं महाज्ञानी।।
भावश्रुत/(अनुभव) बिन द्रव्यश्रुत से न होता केवलज्ञान,
केवलज्ञान है पूर्ण प्रत्यक्ष आंशिक अनुभवज्ञान/(अनुभव श्रुतज्ञान)
अनुभव ज्ञान है विशद ज्ञान न होता संशय विभ्रम,
अनध्यवसाय रहित होता सहित सत्यज्ञान।।
एक सत्य अनुभव से अनेक असत्य होते ज्ञात,
एक सूर्य के उदय से प्रकाशित होते सहस्त्र शत।
जहाँ न पहुँचे रवि जगत में वहाँ भी पहुँचे कवि,
जहाँ न पहुँचे कवि जगत में वहाँ (भी) पहुँचे अनुभवी।।
मिष्ठान्न अनुभव बिन पढ़े सुने भी मिष्ठान्न,
पुस्तक/(किताब) लिखे बखान करे तो भी अज्ञात मिष्ठान्न।
तथा ही हर विषय में ऐसा ही जानने योग्य,
धर्म दर्शन विज्ञान या न्यायनीति या काव्य।।
पोथी पढ़-पढ़ जग मुँआ पण्डित भया न कोय,
(ढ़ाई अक्षर प्रेम/(आत्म) का पढ़े सो पण्डित होय) (कबीर) /
अनुभव बिन जानकारी से कोई न ज्ञानी होय।
जानकारी नहीं शिक्षा/(विद्या) है जानकारी नहीं ज्ञान,
जानकारी नहीं धर्म है जानकारी नहीं मर्म।।
सूचना क्रान्ति युग में अनुभव हो रहा है हीन,
जिसके कारण मानव हो रहा है दिशा हीन।
भटकाव हो रही है यात्रा सब हो रहे हैं अस्त व व्यस्त,
भौतिक विकास की चकाचौंध में हो रहे हैं संत्रस्त।।
स्व-पर-विश्वकल्याण हेतु जो मैं किया अनुभव,
उसे ही मैंने लिपिबद्ध किया अन्य भी कर अनुभव।
अनुभव पारसमणी से जानकारी बने सुज्ञान,
सुज्ञानी से सदाचारी बने जिससे होता कल्याण।।
कल्याण मंगल सुख शान्ति हो यह है मेरी भावना,
इसी हेतु ही 'कनकनन्दी' की कविता हुई रचना।।
परसाद 6.3.2012, रात्रि 4:35

कविता रचना से प्राप्त अनुभव

-आचार्य कनकनन्दी

(चालः छोटी-छोटी गैया, रघुपति राघव, सायोनारा, आत्मशक्ति से.....)

अच्छी कवितायें मुझे प्रिय लगती, श्रेष्ठ कविता की शिक्षा अच्छी लगती
गाने में लेखने में मंद रहा हूँ, लेखने के विचार सह रहा हूँ।।

अतएव गद्य में ग्रंथ लिखा हूँ, शताधिक ग्रंथों को मैं लिखा हूँ।।
पद्य रचना का मेरा भाव न मरा, धीरे-धीरे मेरा भाव अन्दर भरा।

आधुनिक कविता की तुच्छता द्वारा, शिक्षा हीन, स्तर हीन कविता द्वारा।
मेरे भाव ने उछाल प्रबल भरा, कविता (के) रूप में बही वह धारा।

धारा को सजाया सुविज्ञसिंधु ने, संघस्थ साधु-साध्वी ब्रह्मचारी ने।
ज्ञानी दानी भक्तों से प्रसार हुआ, केवल मेरा भाव निमित्त हुआ।

पद्य रचना से लाभ हो रहा (है) अनुभव मुझे मिल भी रहा (है)।।
पवित्र भावना भी बढ़ रही है, कल्पना भी उड़ान भर रही है।

अनुभति भी मेरी बढ़ रही है, महिमा गरिमा भी भा रही है।
लालित्य (व) कोमलता मोह रही है, प्रवाह की धारा बह रही है।

कविता/(पद्य) में संक्षिप्त पद/(शब्द) चाहिये, उच्चारण लघुपद सह चाहिये।
चरण/(वाक्य) विन्यास भी विचित्र होते, क्रियापद बिना भी वाक्य बनते।

संक्षिप्त से अधिक कथन होता, मधुर प्रभावी वचन होता।
व्याजात्मक /(व्यंगात्मक) कथन भी कटु न होता, अलंकृत वाक्य का भी प्रयोग होता।

समय सदुपयोग उत्तम होता, समन्वय ज्ञान का प्रयोग होता।
मन की एकाग्रता अधिक होती, कनक की भावना प्रगट होती।।

परसाद 6.3.2013, मध्याह्न 3:10

33वीं दीक्षा दिवस के स्मरण में रचित
''मेरे (आ. कनकनन्दी के) आध्यात्मिक गुरु गुण वर्णन''

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : वसन्ततिलका (भक्तामर...), एके लाल दरवाजे.....)

विमलसागर गुरु मम प्राण प्यारे, वात्सल्य मूर्ति सहृदय जग में निराले।

मोक्षमार्ग प्रदर्शक मम आद्य गुरु, साहित्य रचना मेरी तुमसे हुई है शुरू।।

श्री कुन्थुसागर गुरु शिक्षा-दीक्षा दाता, कोमल हृदयी प्रभो! बहु दीक्षा दाता।

संघानुशासन तथा अध्यापन कार्य, आपने दिया मुझको व्यवस्था के कार्य।। (1)

भरतसागर गुरु सरल सुशान्त, मम प्रोत्साहक तव वरद है हस्त।

ज्ञान प्रदायक मम शंका निवारक, ग्रन्थ रचना के मेरे तुम हो प्रोत्साहक।।

माता **विजयामती** है मम ज्ञानदात्री, सिद्धान्त पारगामी गणिनी श्रमणी।

अध्ययन अध्यापन लेखने सुदक्षा, हितोपदेशे-कुशल व्रत में पवित्रा।। (2)

उदार सूरी **विद्यानन्द** (मम) शिक्षा दाता, ज्ञानोपकरण तथा औषधि प्रदाता।

शंका समाधान तथा प्रोत्साहन दाता, श्रमण दीक्षा समये सुमार्ग प्रदाता।।

देशभूषण गुरु वरेण्य वरिष्ठ सूरी, सिद्धान्तचक्री पद (में) आप का आशीष।

आपके निर्देशन में शिविर लगाया, अध्यापन कार्य आपने मुझको है दिया।। (3)

अभिनन्दन सूरीवर सरल सुशान्त, आचार्य संस्कार प्रदाता सूरी भगवन्।

आचार्यरत्न पदवी आपसे प्रदत्त, आपका मिला मुझको वरद श्रीहस्त।।

त्रिकालवर्ती लोक में स्थित पंचगुरु, नमन स्मरणीय मेरे आध्यात्म गुरु।

स्वात्मा की प्राप्ति होवे सुशीघ्र मेरी, 'कनक' करे अतः प्रार्थना तुम्हारी।। (4)

खेरवाड़ा 5.2.2013, मध्याह्न 1:27

''मेरा परम अन्तिम लक्ष्य''

(मरने के पहले मैं स्वयं को पाना चाहता हूँ)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : तेरे प्यार का आसरा.....)

मरने के पहले मैं जानना चाहता हूँ, मेरा कौन है? और मैं कौन हूँ?

मैं क्या तन-मन-प्राणवायु हूँ, मुझको मेरे द्वारा पाना चाहता हूँ।

मैं क्या मानव समाज रूप हूँ, मेरा मौलिक रूप जीना चाहता हूँ।

मैं क्या किशोर युवक वृद्ध हूँ? सनातन सत्य रूप होना चाहता हूँ।।

कर्म संस्कार या जीनोम क्या मैं हूँ? सच्चिदानन्दमय होना चाहता हूँ।

जन्म-जरा-मरण क्या मेरा रूप है? सत्य-शिव-सुन्दर तो मेरा रूप है।।

सत्ता सम्पत्ति क्या प्रसिद्धि मैं हूँ? मैं तो अमूर्तिक ज्ञानानन्द हूँ।

यथा आकाश नीला गुम्बदाकार न होता, तथा भौतिक न स्वरूप मेरा न होता।
जन्म-मरण-संयोग-वियोग आदि, पौद्गलिक रूप आधि-व्याधि-उपाधि।
आँख सम पर को मैं नहीं देखूँगा, स्व-प्रकाशी/(सब प्रकाशी) मैं हूँ मेरे द्वारा देखूँगा।।
गिद्ध पक्षी सम मैं न शव देखूँगा, ज्ञान चक्षु द्वारा मुझे मैं ही देखूँगा।
काम-क्रोध-मद-माया-लोभ नहीं हूँ, संकल्प विकल्पहीन ज्ञानधन हूँ।।
आकर्षण-विकर्षण रिक्त रूप हूँ, धीर-वीर-गंभीर साम्य रूप हूँ।
लौकिकाचार परे आत्मरूप हूँ, 'कनक' न मेरा रूप चिदानन्दमय हूँ।।

बावलवाड़ा 1.12.2012, रात्रि 11.11

मेरी भावना एवं साधना

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : 1. सायोनारा....., 2. तुम दिल की धड़कन.....)
मेरी भावना मैं सतत भाता हूँ, भावना मेरी सदा पावन हो।
उदार सहिष्णु साम्य युक्त/(सह) हो, स्व-पर हितकारी मंगल हो।।
सनम्र सत्यग्राही सदा मैं बनूँ, राग-द्वेष मोह परे भी हो।
ईर्ष्या तृष्णा मद काम से रहित, सरल सहज सुशान्त हो।।
गुणग्राही मैं सदा ही बनूँ, दुर्गुणी से शिक्षा सदा लहूँ।
प्रतिस्पर्द्धा बिना विकास करूँ, आकर्षण-विकर्षण परे रहूँ।।
ख्याति पूजा लाभ से विरहित, अपना-पराया भेद से रिक्त।
स्व-पर-विश्वहित चिन्तन करूँ, लेखन वचन क्रिया सहित।।
अन्य से अविचल रहूँ मैं सदा, ज्ञाता दृष्टा कर्त्ता मेरा रहूँ।
द्रव्य क्षेत्र काल सुयोग्य सहित, आहार विहार निवास करूँ।।
उपलब्धियों का सदुपयोग करूँ, विशेष उसे विकास करूँ।
दुरूपयोग कभी मैं न करूँ, अहंकार दीनता से दूर रहूँ।।
धीर वीर गम्भीर रहूँ सदा, चिन्तन समीक्षा सदा करूँ।
आत्म विशुद्धि में रत रहूँ सदा, स्वयं प्रामाणिक सदा रहूँ।।
आत्मोपलब्धि ही मेरा परम लक्ष्य, तदनुकूल ही मैं रत रहूँ।
उत्सर्ग/(निश्चय) अपवाद साधना सहित, लक्ष्य प्राप्ति हेतु आगे बढ़ूँ।।

''मेरे योग्य त्यजनीय करणीय एवं वरणीय''
(मेरी प्रतिज्ञा साधना एवं उपलब्धि)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : 1. यमुना किनारे....., 2. अच्छा सिला दिया.....)
जिससे परम सत्य न मिले है, वह परम प्राप्य मेरा नहीं है।
जिससे चरम/(आत्मिक/शाश्वत्/अमर) सुख न मिलता, वह मेरा अन्तिम लक्ष्य नहीं है।।
जिससे आत्मा की शुचिता न होती, वह धार्मिक क्रिया नहीं चाहिए।
जिस साधना से समता नहीं बढ़ती, वह साधना मुझे नहीं चाहिए।।
अपेक्षा उपेक्षा प्रतीक्षा युक्त, राग द्वेष ईर्ष्या घृणा युक्त।
दबाव प्रलोभनमय युक्त, दीन हीन अहं भाव युक्त।।
ख्याति पूजा लाभ मोह सहित, याचना द्वन्द्व व संक्लेश युक्त।
संकल्प विकल्प व भ्रम सहित, कार्य न होगा मुझसे ज्ञात।।
भेदभाव मैं करूँगा नहीं, संकीर्ण हठग्राही बनूँगा नहीं।
निन्दा चुगली करूँगा नहीं, खोटे/(छोटे) भाव भरूँगा नहीं।।
आकर्षित-विकर्षित बनूँगा नहीं, दूसरों की बातों में पड़ूँगा/(फसूँगा) नहीं।
अन्य की कुचिन्ता करूँगा नहीं, खोटी प्रतिज्ञा करूँगा नहीं।।
वाद-विवाद में पड़ूँगा नहीं, कुतर्क-वितर्क करूँगा नहीं।
वैर-विरोध भी करूँगा नहीं, सत्य-साम्य-शान्ति छोड़ूँगा नहीं।।
आलस्य प्रमादी बनूँगा नहीं, ध्यान अध्ययन छोड़ूँगा नहीं।
आडम्बर प्रपंच रचूँगा नहीं, अनुभव विपरीत चलूँगा नहीं।।
द्रव्य क्षेत्र काल सुभाव युक्त, निश्चय व्यवहार नय सहित।
उत्सर्ग-अपवाद क्रिया सहित, आचरण करूँगा समता युक्त।।
बाह्य क्रिया करूँगा शक्ति युक्त, अंतरंग साधना समता युक्त।
तन मन आत्मा स्वास्थ्य योग्य, आहार विहार निवास युक्त।।
धन जन मान का नहीं लोभ, आत्म विशुद्ध का हो लाभ।
निस्पृह संतोष हो ज्ञानानन्द, 'कनक' का लक्ष्य निजानन्द।।

बावलवाड़ा 4.12.2012, रात्रि 10:25

''अजीबो-गरीब मेरी प्रवृत्ति''

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : इक परदेशी....., है अपना दिल....., तुम दिल की.....)

भिन्न-भिन्न कर्म भिन्न-भिन्न भाव, भिन्न-भिन्न लक्ष्य होता जीवों में।
तद्नुकूल रुचि तथाहि प्रकृति, प्रकृति अनुसार होती प्रवृत्ति।।ध्रु.।।

किसी की प्रवृत्ति सत्ता सम्पत्ति में होती, मेरी तो होती सत्य समता में।
किसी की प्रवृत्ति जन-मान में होती, मेरी तो होती मौन-एकान्त में।।

किसी की प्रवृत्ति ईर्ष्या तृष्णा में होती, मेरी तो होती ज्ञान-वैराग्य में।
किसी की प्रवृत्ति राग-द्वेष में होती, मेरी तो होती वीतरागता में।। (1)

किसी की प्रवृत्ति बाह्य आडम्बर (में) होती, मेरी तो होती ध्यान-अध्ययन में।
किसी की प्रवृत्ति पूजा-पाठ में होती, मेरी तो होती आत्मचिन्तन में।।

किसी की प्रवृत्ति राग-रंग में होती, मेरी तो होती तत्त्वचिन्तन में।
किसी की प्रवृत्ति कूट-कपट की होती, मेरी तो होती सीधा-सरल में।। (2)

किसी की प्रवृत्ति परावलम्बन/(पर-अपेक्षा) होती, मेरी तो होती आत्मावलम्बन की।
किसी की प्रवृत्ति पर-प्रतीक्षा की होती, मेरी तो होती स्वतः प्रवृत्ति की।।

कोई अकल बिना भी नकल करता है, मैं तो गुण-ग्रहण सदा ही करता।
दोषी से भी घृणा नहीं करता हूँ, उसी से भी शिक्षा सदा ही लेता।। (3)

वाचन से अधिक मैं चिन्तन करता हूँ, चिन्तन से करता हूँ आचरण।
उसी से अनुभव मैं प्राप्त करके ही, ग्राह्य-अग्राह्य का करता (हूँ) विश्लेषण।।

इसलिये मेरे काम अलग होते हैं, अन्य को लगता है अजीबो-गरीब।
कनक (नन्दी) तो इसी में व्यस्त-मस्त है, अन्य कोई मेरे से न होता करीब।। (4)

बावलवाड़ा 2.12.2012, मध्याह्न 2:38

''पापी-दोषी से भी मैं क्यों नहीं करता हूँ घृणा?''

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : छोटी-छोटी गैया....., यमुना किनारे श्याम.....)

अन्य के कारण मैं पापी क्यों बनूँ...राग-द्वेष करके दुःखी क्यों बनूँ?
दूसरों के दोषों से दोषी क्यों बनूँ...दूसरों से विचलित मैं क्यों बनूँ?

सर्व जीवों में मैत्री भाव मैं रखूँ...गुणी जीवों से प्रमुदित मैं बनूँ।
दुःखी जीव प्रति कृपाभाव मैं रखूँ...पापी जीव प्रति साम्यभाव मैं रखूँ।।
मैत्री भावना से उदारता भी आती...पीड़ा देने की भावना दूर भी होती।
प्रमुदित होने से सुख मिलता...पाप दूर होता व पुण्य मिलता।।
कृपाभावना से संवेदना बढ़ती...पर दुःख दूर हेतु भावना होती।
साम्यभाव से राग-द्वेष न होते...नानाविध पापों के बन्ध न होते।।
राग-द्वेष से संक्लेश भाव भी होते...जिससे तन-मन अस्वस्थ (भी) होते।
मानसिक अस्थिरता खूब बढ़ती...मानसिक अशान्ति की वृद्धि भी होती।।
क्रोध से ओजशक्ति नष्ट भी होती...जिससे जीवनशक्ति में क्षीणता आती।
ज्ञानतन्तु नाश से बुद्धि नशती...शालीनता सुन्दरता शान्ति नशती।।
ईर्ष्या से पित्त की वृद्धि भी होती...इन्द्रियों की तेजस्विता विनष्ट होती।
लीवर खराबी तथा पथरी होती...दूसरों की अच्छाई न अच्छी लगती।।
ईर्ष्या घृणा द्वेष से लाभ न होता...दोषी न सुधरता स्वयं दोषी हो जाता।
ईंधन से अग्नि कभी शान्त न होती...ईंधन अभाव से अग्नि बुझती।।
नवकोटी से रागद्वेष न करूँ...स्व-पर को कष्ट दे पापी न बनूँ।
शान्ति-प्राप्ति 'कनक' का परम ध्येय...ध्येय में न बाधक बनाऊँ ज्ञेय।।

बावलवाड़ा 2.12.2012, रात्रि 10:53

''अनुभव पाठशाला के नवनीत''

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)

1. **बुद्धिजीवी-**

प्रायः बुद्धिजीवी होते हैं स्वार्थी, जो भावना रहित होते हैं।
कुतर्की धूर्त व कंजूस होते, ईर्ष्या द्वेष घृणा से सहित होते।।
भावना सहित जो बुद्धिजीवी होते, उनमें ये कुगुण नहीं होते।
किन्तु भावना सह बुद्धिजीवी, अत्यन्त दुर्लभ पाये जाते।।

2. **धार्मिक-**

अन्य धर्म द्वेषी धार्मिक जन, प्रचुर मात्रा में होते हैं।
संकीर्ण स्वार्थ हेतु धर्म करते, उदार सहिष्णु न होते हैं।।

कर्त्तावादी या अकर्त्तावादी धार्मिक, अथवा एकेश्वरवादी बहुदेववादी।
भाव-व्यवहार से हैं चार्वाकवादी, अन्य सब वाद होते दिखावा वादी।।
उदार सहिष्णु अध्यात्मधर्मी, अत्यन्त दुर्लभ होते हैं।
आध्यात्मिक अनुभवी समताधारी, पावन निस्पृह होते हैं।।

3. **राजनीति-**

राजतंत्र या हो लोकतंत्रवाद, समाजवाद हो या पूँजीवाद।
सत्ता सम्पत्ति ही है प्रमुखवाद, साम्यवाद नहीं होता प्रमुखवाद।।

4. **उपदेश-अनुशासन-**

अन्य को उपदेश या शासन करना, सामान्य मानव करते हैं।
आत्मानुशासन व उपदेश देना; महान् जन ही कर पाते हैं।।

5. **आधुनिक-**

फैशन-व्यसन मोबाईल बाईक व, जीन्स सूट-बूट टाई से।
डिग्रीधारी या नगर निवासी, क्लब फास्ट-फूड खाने से।।
इंटरनेट या कंप्यूटर प्रयोग से, टी.वी. या सिनेमा देखने से।
अंग्रेजी ज्ञान या विदेश जाने से, आधुनिक नहीं हो पाते हैं।।
आधुनिक ज्ञान-विज्ञान सहित, वैश्विक भाव-व्यवहार सहित।
उदार प्रगतिशील साम्य युक्त, सहिष्णु जन आधुनिक होते हैं।।

6. **संस्कृति-**

नाच-गान या वेशभूषा से/(ही), यथार्थ संस्कृति नहीं होती है।
तन-मन आत्मा को संस्कार करे, वही सही संस्कृति होती है।।
संस्कृति है दया सेवा परोपकार, प्रामाणिकता व शिष्टाचार।
आध्यात्मिक विशुद्धि ज्ञान-ध्यान, परमात्मा बनने का श्रेष्ठाचार।।

7. **ज्ञान/(शिक्षा)-**

केवल पढ़ना या याद करना, उपदेश देना या ग्रन्थ लिखना।
यह ही नहीं होता सही ज्ञान, वाद-विवाद ज्ञान मद करना।।
हिताहित विवेक व आत्मज्ञान, स्व-पर हितकारी सच्चाज्ञान।
संक्लेष-कषाय नाशक तत्त्वज्ञान, मोक्षसुख दायक महान् ज्ञान।।

8. **पूजा-प्रार्थना-**

केवल स्तुति या पूजा अर्चना, तीर्थयात्रा करना नाम जपना।
यथार्थ से नहीं है पूजा-प्रार्थना, मन में यदि नहीं शुचि भावना।।

पूज्य पुरुषों के गुण स्मरण-कथन, महान् गुणों के अनुकरण।
पावन तन-मन हो आचरण, यथार्थ है पूजा शुचि जीवन।।
शिक्षा धर्म या सभ्यता संस्कृति, राजनीति कानून समाज नीति।
व्यापार कला संगीत नृत्य, सब में मानव करे विकृति।।
सत्य समता व शान्ति न्याययुक्त, उदार सहिष्णु अहिंसायुक्त।
सभी होते युक्त अन्यथा अयुक्त, ''कनक'' अनुभव के यह नवनीत।।

बावलवाड़ा 18.12.2012, प्रातः 8:08

''पाश्चात्य के लोगों से मुझे प्राप्त शिक्षायें''

(पाश्चात्य लोगों की प्रायोगिक अच्छाइयों से प्राप्त शिक्षायें)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : छोटी-छोटी गैया....., तुम दिल की.....)

हर व्यक्ति से मैं शिक्षा लेता हूँ, गुणी व दुर्गुणी से शिक्षा पाता हूँ।
देश-विदेशों से शिक्षा लेता हूँ, हर संस्कृति से शिक्षा पाता हूँ।
हमारी संस्कृति है विश्व संस्कृति, आध्यात्मिक ज्ञान युक्त श्रेष्ठ संस्कृति।
ज्ञान-विज्ञान गणित सत्य (सह) संस्कृति।
उदार/(अहिंसा) सहिष्णु धैर्य क्षमा संस्कृति।। (1)

पाश्चात्य संस्कृति है भौतिक संस्कृति, राजनैतिक सामाजिक संस्कृति।
भौतिक सुख-सुविधा भोगी संस्कृति, ऐहिक सुखभोगी संस्कृति।
आध्यात्मिकता के पाठ भारत में मिले, कर्म सिद्धान्त अलौकिक गणित मिले।
ग्रन्थों में लिखित ज्ञान-विज्ञान मिले, महापुरुषों के आदर्श चारित्र मिले।। (2)

परम्परा रूढ़ि से तो बहुत मिले, लिखित में बहुविध ज्ञान भी मिले।
प्रायोगिक रूप से कम ही मिले, विपरीत रूप से अधिक मिले।
पाश्चात्य से अधिक प्रयोग मिले, नैतिक देशप्रेम साहस मिले।
शोध-बोध खोज आविष्कार भी मिले, कर्त्तव्यनिष्ठ (व) परिश्रमी भी मिले।। (3)

स्वच्छता प्रामाणिकता सेवा भी मिली, प्रकृति संरक्षण की संस्कृति मिली।
प्रगतिशीलता स्वतंत्रता भी मिली, उदारता युक्त राजनीति भी मिली।
तार्किक गुणग्राही उदार मिले, वैश्विक कुटुम्ब के भाव भी/(मानव) मिले।

गुणी के समर्थक गुणी भी मिले, सर्वजीव हितकारी संस्थान मिले।। (4)

गुणीजन को पुरस्कार अधिक देते, धन्यवाद कृतज्ञता (अधिक) व्यक्त करते।
क्षमा व प्रसन्नता व्यक्त करते, पशु-पक्षी वृक्षों को सम्मान देते।
कार्यकारण सम्बन्ध का शोध करते, हर घटना से शिक्षा भी लेते।
नकलची कामचोरी नहीं करते, भ्रष्टाचार-मिलावट नहीं करते।। (5)

न्याय व अनुशासन सही पालते, गृह कर्मचारी प्रायः/(भी) नहीं रखते।
शिक्षा हेतु पर्यटन खूब करते, साहसिक मनोरंजन प्रायः करते।
राष्ट्रीय सम्पत्ति की रक्षा करते; उसकी संवृद्धि हेतु यत्न करते।
विरोध में भी नष्ट नहीं करते, जहाँ-तहाँ गन्दगी नहीं करते।। (6)

अयोग्य अहितकर (को) शीघ्र छोड़ते, वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा करते।
प्रमाद आलस्य में नहीं फँसते, व्यर्थ बातों में समय नहीं गँवाते।
भारतीय संस्कृति से प्रेम करते, ज्ञानी गुणी सन्त से शिक्षा भी लेते।
योगा ध्यान शाकाहार श्रेष्ठ मानते, कला नृत्य संगीत को ज्येष्ठ मानते।। (7)

भारतीय ग्रन्थों से ज्ञान करते, उससे नवीन शोध-बोध करते।
भारतीय भाषाओं का ज्ञान करते, भारतीय संस्कृति की दीक्षा भी लेते।
इन सबसे मैं शिक्षा भी लेता, प्रयोग भी यथायोग्य मैं करता।
किसी से भी घृणा भाव नहीं रखता, 'कनक' सतत गुणग्राही रहते।। (8)

बाह्य प्रभावना मैं क्यों कम करता हूँ?

स्व-प्रभावना सतत करता हूँ तथा बाह्य प्रभावना यथायोग्य

-आचार्य कनकनन्दी

(विविध रागीय कविता.....)

1. (नाव तुझे घेता देवा होई समाधान....(मराठी)
2. छुप गया कोई रे...दूर से पुकार के...
3. दुनियाँ में हम आये हैं तो जीना ही पड़ेगा...)

स्व-प्रभावना करता हूँ मैं रत्नत्रय से, बाह्य प्रभावना करता हूँ (मैं) यथायोग्य से।
दोनों में से स्व की मैं करता सदा, बाह्य की मैं न करता सदा सर्वदा।।ध्रुव पद।।

स्व-भाव की प्रकृष्टता स्व-प्रभावना, समता-शान्ति बढ़ाना स्व-प्रभावना।
संक्लेश लन्द-फन्द से रिक्त भावना, ख्याति-पूजा-लाभ से शून्य भावना।।(1)।।

दबाव-प्रलोभन से हीन भावना, भेद-भाव रहित साम्य भावना।
चन्दा-चिट्ठा याचना से शून्य भावना, स्वाध्याय लेखन युक्त शुभ भावना।।(2)।।

इससे युक्त बाह्य प्रभावना मैं तो करूँ, इनसे रिक्त प्रभावना कभी न करूँ।
इससे रिक्त स्थिति/(स्थान) में समता मैं रखूँ/(माध्यस्थ रहूँ)
निस्पृह शान्त भाव से (मैं) मनन करूँ।।(3)।।

महँगाई से संत्रस्त सामान्य जनों को, अस्त-व्यस्त संत्रस्त रहने वालों को।
गृहकार्य-पढ़ाई व व्यापार में रत, नौकरी आदि में व्यस्त आबाल-वृद्धों को।।(4)।।

भावना-क्षमता-रुचि रहित जनों को, समय साधन धन रहित जनों को।
बाह्य प्रभावना हेतु न डालूँ दबाव, प्रलोभन भय का न डालूँ प्रभाव/(दबाव)।।(5)।।

सहज भाव से (मैं) करता हूँ प्रभावना, शिविर-संगोष्ठी-कक्षादि की आयोजना।
साहित्य छपाना या प्रवचन आयोजना, देश-विदेशों में जो होती है प्रभावना।।(6)।।

रूपयों के चन्दा-चिट्ठा स्वयं न करता, मन्दिर मूर्ति भवन मैं न बनाता।
विधान पंचकल्याणक में प्रवचन ही देता, इसमें कर्त्ता-धर्त्ता मैं न बनता।।(7)।।

अधिक साधन की इसमें/(जिसमें) जरूरत होती, धन-जन-समय की जरूरत होती।
इस हेतु धनी की आवश्यकता होती, धन हेतु याचना मुझसे न होती।।(8)।।

अधिक धन हेतु प्रायः भ्रष्टाचार होता, भ्रष्टाचार का धन तो पापात्मक होता।
इस धन का प्रयोग भी पापमय होता, अतएव ऐसा कार्य मैं त्याग करता।।(9)।।

मेरे भक्त-शिष्यजन स्वेच्छा से करते, ग्रन्थ छपाना प्रभावना भक्ति से करते।
मैं तो उन्हें केवल ज्ञानदान देता, 'कनकनन्दी' तो स्व-प्रभावना करता।।(10)।।

आध्यात्मिक-दार्शनिक शिक्षाप्रद कविता

''अन्य की संकीर्ण-स्वार्थपरता से मुझे प्राप्त शिक्षायें''

(अन्य से अस्त-व्यस्त-संत्रस्तता से मुझे प्राप्त शिक्षायें)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : छोटी-छोटी गैया....., तुम दिल की.....)

स्व-स्व स्वार्थ में अन्य है संत्रस्त, संत्रस्त में ही होते हैं वे व्यस्त।
व्यस्त में भी वे न जानते सत्य, तथापि मानते स्वयं को ही श्रेष्ठ।।
सत्य व सुख को वे नहीं जानते, मन्यमाना अहं भाव भी रखते।

स्वार्थ में ही अस्त-व्यस्त वे रहते, यद्वा-तद्वा सुख शान्ति को चाहते।।
अतएव मुझे करणीय सदा, शिक्षा से ज्ञान वरणीय सदा।
आत्मकल्याण ही करणीय सदा, सत्य-साम्य-सुख वरणीय सदा।।
यदि अन्य जन स्व स्वार्थ में रत, मुझे भी स्व-स्वार्थ साधना सतत।
क्षुद्र स्वार्थ में यदि अन्य है संत्रस्त, मैं क्यों न रहूँ निज साधना में रत।।
साधना में मेरा समय बीतता, साधना में व्यस्त-मस्त मैं रहता।
सत्य साम्य सुख मुझे (तो) मिलता, संक्लेश दुःख से दूर मैं रहता।।
उत्तम स्वात्म चिन्ता ही होती, मोह चिन्ता भी मध्यमा होती।
काम चिन्ता तो अधमा होती, पर चिन्ता अधमाधमा होती।।
आत्महित है आद्य करणीय, संभव हो परहित करणीय।
आत्महित परहित के मध्ये, आत्महित है श्रेष्ठ करणीय।।
तीर्थंकर मुनि ऋषि आध्यात्मिक, सत्य व शान्ति के (जो) होते साधक।
उन्हीं का ही यह मार्ग है परम, मेरे लिये भी है मार्ग/(धर्म) परम।।
अतः उन्होंने धन जन त्यागा, मान-प्रतिष्ठा व राग-द्वेष त्यागा।
एकान्त मौन व समता में रहे, आत्म प्राप्ति हेतु साधना में रहे।।
जिससे उन्हीं को मोक्ष प्राप्त हुआ, अनन्त सुख उन्होंने प्राप्त किया।
मुझे भी सतत यही करणीय, 'कनकनन्दी' का परम ये ध्येय।।

''मैं दूसरों को उपदेश एवं सुझाव कम क्यों देता हूँ?''

(अन्य के गुरु से स्वयं का शिष्यत्व मेरे लिये श्रेय क्यों?)

(व्यर्थ परोपदेश/(सुझाव) मैं (आ. कनकनन्दी) क्यों त्याग रहा हूँ?)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : शत-शत वन्दन....., इतनी शक्ति हमें....., यमुना किनारे श्याम.....)
हितोपदेश कोई सुनते नहीं...सुनकर मनन भी करते नहीं।
आचरण अनुभव करते नहीं...अतएव उपदेश मैं करता नहीं।।
इसमें अनेक कारण भी होते...क्षुद्र उद्देश्य व मन्दमती भी होते।
संक्लेशित चंचल मन के होते...अहं दीन भावी व प्रमादी होते।। (1)
अस्त-व्यस्त जीवन सहित होते...सत्ता-सम्पत्ति में लिप्त होते।
फैशन-व्यसन ही परम ध्येय...भोग-विलासिता जिन्हें भी प्रिय।।

अतः पढ़ाई व धन कमाते...नौकरी वाणिज्य कृषि करते।
इन्द्रिय भोग में मस्त रहते...निन्दा चुगली में व्यस्त रहते।। (2)

धार्मिक रूढ़िवादी भी होते...संकीर्ण कट्टरता सहित होते।
पन्थ मत क्रिया को ही मानते...अनुदार व ईर्ष्यालु होते।।
तथाहि कुछ साधु-साध्वी भी होते...त्यागी व्रती व पण्डित होते।
अन्यमत संघ से घृणा करते...सत्य-तथ्य को भी नहीं मानते।। (3)

अपूर्ण जानकारी को सही मानते...देखादेखी से ही धर्म करते।
उसी से ही स्वर्ग-मोक्ष मानते...मोहान्धकार को नहीं त्यागते।।
कुछ पुस्तकीय ज्ञानी भी होते...ज्ञानमद को ही धर्म मानते।
सत्य ज्ञान से वे विमुख होते...आध्यात्म सन्त से घृणा करते।। (4)

दुःख अनन्तर कुछ मानते...ठोकर खाकर ठाकुर होते।
कष्ट बिना नहीं समझ पाते...कष्ट से भी कुछ नहीं मानते।।
कुछ हठग्राही निष्ठुर (भी) होते...हितोपदेशी को कष्ट भी देते।
वाद-विवाद व द्वेष करते...निन्दा अपमान घृणा करते।। (5)

कुछ आदत के दास भी होते...कुछ मनमानी चालाक होते।
कुछ जानकर/(जागकर) सोते रहते...जगाने पर भी नहीं जगते।।
कुछ मुझे अन्य के सम मानते...रागी-द्वेषी-स्वार्थी सम मानते।
निन्दक चापलूस सम मानते...मेरी उदारता को नहीं जानते।। (6)

बार-बार बोलना मुझे न भाता...दबाव प्रलोभित मैं न करता।
करुणाभाव/(उदारभाव) से ही बोलता...विश्वकल्याण का भाव रखता।।
रायचन्द भी मैं नहीं बनता...अप्रयोजन नहीं बोलता।
न मानने वालों को नहीं बोलता...परनिन्दा अपमान नहीं करता।। (7)

उद्देश्य निर्देश को नहीं जानते...अधिक बोलने पर मानते।
स्वार्थसिद्धि की ही बातें सुनते...मनानुसार ही उपदेश/(सुझाव) सुनते।।
उपदेश/(सुझाव) समय में सोते रहते...इधर-उधर की बातें करते।
विवाद कुतर्क कुछ करते...अपना मत हम पर थोपते।। (8)

पात्र-अपात्र का मैं ध्यान रखता...स्वगरिमा/(मर्यादा) का भी ध्यान रखता।
दुरुपयोग (मैं) किसका नहीं करता...स्व-पर उपकार ही सदा करता।।
अतः उपदेश/(सुझाव) व्यर्थ भी/(ही) जाते...योग्य शिष्य प्रायः कम मिलते।
योग्य शिष्य को मैं ज्ञान भी देता...निस्पृहता से ज्ञानदान करता।। (9)

व्यर्थ उपदेश मैं नहीं करता...समय शक्ति न व्यर्थ गँवाता।
परोपदेशी न ज्ञानी बनता...'कनक' स्वयं का शिष्य बनता।। (10)

मेरी भावना एवं व्यवहार

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : सायोनारा.....)
जय जय हो जय जय हो, सत्य भाव की जय जय हो।
पावन अन्तर भावों से, सब मिलकर के जय बोलो।।...जय-जय...

सदा सर्वदा मैं भावना भाऊँ, भावानुसार भी काम मैं करूँ।
सर्वोदय ही मैं सदा करूँ, अन्य को कभी न बाधा भी डालूँ।।
सर्वोदय के भावों से सब मिलकर के जय बोलो...जय जय हो...(1)

विजय प्राप्त मैं सदा ही करूँ, अन्य को पराजय कभी न करूँ।
सत्य मार्ग पर सदा मैं चलूँ, असत्य मार्गी से घृणा न करूँ।।
सत्य के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(2)

विश्वास कभी न किसी का करूँ, विश्वासघात भी कभी न करूँ।
सत्य परिज्ञान जब ही होता/(करूँ), विश्वास तत्क्षण तब ही करूँ।।
श्रद्धा/(प्रतीती) के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(3)

मैं कभी किसी की ठगी न करूँ, किसी के द्वारा भी ठगा न जाऊँ।
ठगने का ही भाव न धरूँ, इसके बिना मैं ठगा क्यों जाऊँ।।
आर्जव/(सरलता) के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो-जय-जय हो...(4)

सफलता सदा मैं प्राप्त करूँ, अन्य का शोषण कभी न करूँ।
सत्य साम्य शान्ति को वरूँ/(पाऊँ), मिथ्या विषमता अशान्ति हरूँ/(त्यागूँ)।।
समता के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(5)

किसी का कभी न नकल करूँ, आदर्श को सदा ग्रहण करूँ।
दोषी से भी सदा शिक्षा ग्रहूँ, दोष न करने की प्रतिज्ञा लहूँ।।
आदर्श के भावों से सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(6)

प्रगति पथ पर आगे ही रहूँ, प्रतिस्पर्द्धा मैं कभी न करूँ।
विनम्र भाव सदा मैं धरूँ, दीनता भाव कभी न करूँ/(धरूँ)।।
विनय के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(7)

अनन्त जीव है अनन्त कर्म, तदनुकूल भाव व धर्म।

सब जीवों का मंगल चाहूँ, कर्त्ता-धर्त्ता मैं मेरा ही रहूँ।।
मंगल कामनाओं से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(8)

ज्ञाता-दृष्टा की भावना भाऊँ, राग-द्वेष से परे ही रहूँ।
यथायोग्य कर्त्तव्य भी करूँ, निर्लिप्त भाव से मंगल करूँ।।
निस्पृहता के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(9)

सरल-सहज पावन बनूँ, अज्ञानी-प्रमादी-ढोंगी न बनूँ।
मूढ़-मोही को श्रेष्ठ न मानूँ, श्रेष्ठ बनाने का कर्त्तव्य करूँ।।
सहजता के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(10)

भौतिक श्रेष्ठता से परे मैं बनूँ, आसक्ति बिना भी प्रयोग करूँ।
भौतिकवादी को श्रेष्ठ/(श्रेय) न मानूँ, पावन/(आध्यात्मिक) बने चेष्टा मैं करूँ।।
आत्मिकता के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(11)

शुद्धमय अमूर्तिक सर्व द्रव्य, स्वयंरूप परिणमन करते सर्व।
मैं तो चेतन महान् द्रव्य, क्यों न शुद्ध रूप करूँ स्वभाव।।
विशुद्धता के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(12)

उदार पवित्र भावना धरूँ, स्व-पर-विश्वहित ही चाहूँ।
भावना मेरी सम्पूर्ण करूँ, ''कनकनन्दी'' सदा मैं ध्याऊँ।।
''कनकनन्दी'' मैं शुद्धता धरूँ, ''कनकनन्दी'' मोक्ष को वरूँ।।
उदारता के भावों से, सब मिलकर के जय बोलो...जय-जय हो...(13)

मेरी भावना : स्वोपलब्धि एवं विश्व कल्याण

(स्वभावना-आलोचना एवं साधना)

-आचार्य कनकनन्दी

(तर्ज : 1. छोटी-छोटी गैया....., 2. दुनियाँ में रहना है तो.....)
मेरी भावना सदा होती है, न करूँ शक्ति समय का दुरुपयोग।
जो हुई मेरी उपलब्धि है, करूँ सदा ही सदुपयोग।।1।।
बुद्धि भावना शरीर विद्या, अनुभव व भाषा विज्ञान।
गणित दर्शन तर्क कानून, राजनीति व लौकिक ज्ञान।।2।।
पल-पल में पल्लवित करूँ, जो कुछ मेरी है उपलब्धि।
स्व-पर हित कल्याण हेतु ही, प्रयोग करूँ स्व-उपलब्धि।।3।।

विकथा निन्दा गप्पबाजी में (या), संक्लेश आलस्य राग-द्वेष में।
ख्याति पूजा व दिखावटी में, प्रतिस्पर्द्धा या घृणा-तृष्णा में।।4।।
ढोंग परम्परा रीति-रिवाज में, अस्त-व्यस्त संत्रस्त कार्य में।
सामाजिक लन्द-फन्द कार्य में, खर्च न करूँ उपलब्धि में।।5।।
दूसरों की मैं न नकल करूँ, न करूँ अन्य से तुलना मेरी।
गुण ग्राहकता भावना धरूँ, प्रभावित न होऊँ किसी जन से।।6।।
अन्धानुकरण करूँ न किसी का, व्यक्ति समाज या शिक्षा राष्ट्र का।
पंथ परम्परा रीति-रिवाज का, खान-पान या नीति नियम का।।7।।
राजनीति या कानून ज्ञान, लोक प्रचलित ज्ञान विज्ञान।
सत्यांश को ही ग्रहण करूँ, सतत प्रयास मेरा निदान।।8।।
मेरी उपलब्धि को मैं तो जानता, मेरे लक्ष्य को मैं तो जानता।
मेरी भावना साधना जानता, अन्य न जाने मेरा क्या घाटा?।।9।।
स्व-पर-विश्व कल्याण चाहूँ, तदनुकूल भावना भाऊँ।
व्यवहार भी तथा ही करूँ, कोई न माने मैं क्या करूँ?।।10।।
आदहिद मैं पहले करूँ, शक्ति अनुसार अन्य का करूँ।
आत्म पतन कभी न करूँ, अन्य के कारण पापी न बनूँ।।11।।
अन्य के कारण यदि मैं बनूँ पापी, पापी भी बनायेंगे मुझे भी पापी।
मेरे वे कर्त्ता-हर्त्ता बनेंगे, मेरी स्वतन्त्रता नाश करेंगे।।12।।
अतएव मैं अन्य के द्वारा, अप्रभावी रहूँ साधना द्वारा।
हर जीव स्वयं-स्वयं का कर्त्ता, मैं भी स्वयं बनूँ स्वयं का कर्त्ता।।13।।
मेरा लक्ष्य है सत्य साम्यमय, फल जिसका है चिदानन्दमय।
सर्व जीव भी बने तन्मय, 'कनक' भावना मंगलमय।।14।।

''प्रतिक्रमण''

(आत्मालोचना, आत्मविश्लेषण, आत्मविशुद्धि के उपाय)

(विभावों का परिमार्जन एवं स्वभाव के प्रगटीकरण हेतु प्रतिक्रमण)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : आत्मशक्ति से....., चिंगारी कोई भड़के.....)

प्रतिक्रमण करता हूँ मैं...तन-मन और काय से।
कृत-कारित और अनुमतयुत...द्रव्य और भाव से।।ध्रु.।।

अनादिकाल से हे प्रभु!...जो किया है विपरीत कर्म।
मिथ्यात्व अज्ञान कषायवश...वे सब नाश हो दुष्कर्म।।
अनन्त पंचपरिवर्तन में...चतुर्गतिरूपी संसार में।
चौरासी लाख योनियों में...जो किया है कर्म मोह में।। (1)

सबसे अधिक मैं पाप किया...मोहभाव के कारण।
अनात्म वस्तु को आत्म मानकर...न किया सत्य पहचान।।
शरीर सत्ता सम्पत्ति स्व-पर...शत्रु-मित्र स्व-पर जन।
अपना मानकर इनके हेतु...किया अधिक कुकर्म।। (2)

धार्मिक अन्धश्रद्धान से...संकीर्ण पन्थ मत अपनाया।
हिंसा युद्ध आक्रमण व...भेदभाव घृणा को अपनाया।।
अज्ञान के कारण न जान पाया...हित-अहित के तत्त्व।
हितग्रहण व अहित त्याग...ज्ञान-ज्ञेय के तत्त्व।। (3)

क्रोध-मान-माया-लोभ तथा...नोकषायों के कारण।
हिंसा-झूठ-चोरी-कुशील-परिग्रह...किया भी विविध प्रमाण।।
प्रमादवश अनेक किया...अनर्थदण्ड अहितकर।
आवश्यक बिना ही पाप किया...नवकोटी से अनेक प्रकार।। (4)

पर के अहित चिन्तन व...वाद-विवाद कलह।
फैशन-व्यसन निन्दा-चुगली...ईर्ष्या-घृणा विद्रोह।।
चलने-बैठने-सोने में या...भोजन आदान-प्रदान में।
असि-मसि-कृषि-वाणिज्य-सेवा...शिल्पकला संगीत में।। (5)

राजनीति या कानून में...धार्मिक सामाजिक काम में।
जन्म-मरण व विवाह क्रिया...भोग-उपभोग काम में।।
सम्यग्दृष्टि अवस्था या...श्रावक ब्रह्मचारी अवस्था में।
क्षुल्लक ऐलक आर्यिका या...साधु पाठक सूरी में।। (6)

ज्ञात-अज्ञात भाव में या...शयन स्वप्न जागृत में।
द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव में...जो किया अनात्म काम में।।
वे सब मेरे कुकृत्यों का...कर रहा हूँ मैं प्रतिक्रमण/(आलोचना)।
निन्दा गर्हा पश्चात्ताप युत...आत्मविशुद्धि के कारण।। (7)

पश्चात्ताप से फलश्च्युति...प्रतिक्रमण से पाप विनाश।
अशुभ से शुभ प्राप्त कर...शुद्ध से बनूँ अविनाश।।
मेरे द्रव्य भाव कर्मों को...कर रहा हूँ मैं विसर्जन।
सच्चिदानन्द स्वभाव बिना...अन्य सबका विनाशन।। (8)
मैं ही मुझमें ही स्थिर रहूँ...बनूँ ज्ञानानन्दमय।
'कनक' निजरूप को ही चाहता...जो है विज्ञानघनमय।। (9)

छाणी 11.1.2013, रात्रि 10:42

मेरी आध्यात्मिक यात्रा की दैनिन्दनी (डायरी)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : आत्मशक्ति से.....शत-शत वन्दन.....सुनो-सुनो हे दुनियाँ.....चौपाई-जय हनुमान)
मेरी आध्यात्मिक यात्रा का कर रहा हूँ मैं वर्णन।
ज्ञान वैराग्य चिन्तन हेतु तथा ही अनुप्रेक्षण।। (1)
शिक्षा दीक्षा अध्यापन शिविर साहित्य लेखन।
संगोष्ठी प्रभावना देश-विदेशों का काम।। (2)
मार्ग प्रदर्शक प्रथम गुरु **आचार्य विमलसागर**।
प्रोत्साहक अनुमोदक **आचार्य भरतसागर**।। (3)
शिक्षा दीक्षा गुरु मम आचार्य कुन्थुसागर।
आगम अध्यापिका **विजयमती गुरुवर**।। (4)
उन्नसी सौ छहत्तर (1976) में ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार।
बाल विद्यार्थी अवस्था से ही यह था मेरा विचार।। (5)
गणिनी विजयमती से अनुयोग चारों किया ज्ञान।
शिखरचन्द परमानन्द दिवाकर श्रेयान्स से लिया ज्ञान।। (6)
अतिशय क्षेत्र पपौराजी में क्षुल्लक दीक्षा हुई ग्रहण।
उन्नीस सौ अठहत्तर (1978) में गुरु कुन्थुसागर किया प्रदान।। (7)
मेरा अध्ययन भी चलता रहा तथा करता हूँ अध्यापन।
कुण्डलपुर में ब्रह्मचारिणियों (आ. विद्यासागर जी की) को दिया विद्या दान।। (8)
शोधपूर्ण प्रवचन भी तब से ही कर रहा हूँ।
करणानुयोग-द्रव्यानुयोग सह विज्ञान/(अनुसंधान) जोड़ रहा हूँ।। (9)

जबलपुर में कांजीपंथी विद्वानों को किया मैं ज्ञान दान।
संघस्थ ब्रह्मचारियों को भी कराया अध्यापन।। (10)
श्रवण बेलगोल हेतु हुआ, दोनों संघ का विहार।
गुरुवर विमलसागर व गुरुदेव कुन्थुसागर।। (11)
उन्नीस सौ इक्कासी (1981) में प्रायः दो सौ साधु-साध्वी।
आचार्य देशभूषण सहित, **आचार्य भी विद्यानन्द।।** (12)
अनेक विद्वान् सहित लाखों भी श्रद्धालु जन।
एकत्र हुए अभिषेक हेतु देश-विदेशों के जन।। (13)
साधु-संतों का सामूहिक अध्ययन होता था दो बार।
अध्ययन मेरा विशेष हुआ, प्रश्नों का मिला उत्तर।। (14)
दरबारी लाल कोडिया व आचार्य श्री विद्यानन्द।
प्रभाकर जी से भी अध्ययन किया मिला विशेष आनन्द।। (15)
श्रमण दीक्षा मेरी वहाँ ही हुई द्वारा श्री कुन्थुसागर।
शताधिक साधु-साध्वी समक्ष श्रद्धालु बहु हजार।। (16)
संघस्थ साधु-साध्वियों को कराया अध्यापन।
उन्नीस सौ बयासी (1982) में हुआ **उपाध्याय पदासीन।।** (17)
धवला का जब अध्ययन व अध्यापन भी किया।
सिद्धान्त चक्रवर्ती पद में मुझे आसीन गुरु ने किया।। (18)
आचार्य देशभूषण ने भी समर्थन वहाँ है किया।
उन्नीस सौ पंचासी (1985) में शमनेवाड़ी में हुआ।। (19)
एकान्तवाद का निरसन मैंने नागपुर में भी किया।
एलाचार्य पदवी गुरु ने आरा (बिहार) में (1988) दिया।। (20)
वहाँ से संघ हमारा (35 साधु) सोनागिरी में आया।
गुरु विमलसागर संघ (25 साधु) का वात्सल्य मिलन हुआ।। (21)
सूरी विमल सिंधु की आज्ञा से दोनों संघों को पढ़ाया।
समयसार व द्रव्यसंग्रह दिन में दो बार पढ़ाया।। (22)
विद्यासागर सूरी की तथा सन्मति सागर मुनिवर की।
ब्रह्मचारिणियाँ भी आकर पढ़ी और मुनि विराग सागर भी।। (23)
आर्यिका ज्ञानमती के निवेदन व बड़ौत वालों के कारण।
डेढ़ माह के बाद विहार हुआ हस्तिनापुर समागम।। (24)

हस्तिनापुर में लगा शिविर विद्वान् हेतु विशाल।
समयसार मैंने वहाँ पढ़ाया, विद्वान् (100) सहित मुनिजन।। (25)
पूरे भारत से आये विद्वान् प्रायः है शत जन।
अर्ध शत साधु-साध्वी त्रय संघस्थ ब्रह्मचारी जन।। (26)
विश्व धर्म प्रभाकर पदवी मुझे दिल्ली में हुआ प्रदान।
ज्ञान विज्ञान दिवाकर पदवी मुझे रोहतक में प्रदान।। (27)
उन्नीस सौ छयानवें (1996) को आचार्य पद हुआ प्राप्त।
उसी समय ही आचार्य रत्न सूरी अभिनन्दन से प्राप्त।। (28)
उदयपुर में हुआ सम्पादन यह कार्य सानन्द सहित।
प्रायः अर्ध शत साधु-साध्वी तीन श्रमण संघ सहित।। (29)
तीनों संघ को अध्यापन कराया प्रवचनसार ग्रन्थ महान्।
सहित श्रावक-श्राविका अनेक भी विद्वान् जन।। (30)
ईडर में डेढ़ महीना तक पढ़ाया विशुद्धमती संघ को।
और भी पढ़ाता हूँ प्रोफेसर्स वैज्ञानिक शिष्यों को।। (31)
सागवाड़ा में हुआ वैज्ञानिक संगोष्ठी का शुभारम्भ।
तब से अनेक महान् कार्यों का हुआ भी है शुभारम्भ।। (32)
मेरे शिष्यों द्वारा यह सब कार्य हो रहा है सर्वत्र।
देश के विश्वविद्यालयों से लेकर विश्वधर्म सभा तक।। (33)
साहित्य लेखन में मेरा प्रेरणास्रोत है अनेक।
सूरी विमलसागर कुन्थुसागर भरतसागर अनेक।। (34)
सूरी सन्मतिसागर व पद्मनन्दी विद्यानन्दी शिष्यवर।
सुविज्ञसागर तथा अनेक साधु-साध्वी व दानी वीर।। (35)
बत्तीस शिविर हजारों के कक्षा में पढ़ाया शिष्य लाख।
साधु उपाध्याय आचार्य साध्वी पढ़ाया तीन शत।। (36)
आत्मसाधना ही परम लक्ष्य अन्य है आनुषंगिक।
स्व-पर विश्वकल्याण हेतु करे प्रयत्न ''कनक''।। (37)

परसाद 17.3.2013, रात्रि 12:20

मेरी साहित्य साधनादि में सहयोगी

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : आत्म शक्ति से..... सुनो-सुनो हे.....)

मेरी साहित्य-साधना चल रही है निरन्तर।
इसके लिए सहायक है अनेक संत व भक्तवर।। (1)

हजारों शिष्य-शिष्या मेरे दिगम्बर व श्वेताम्बर।
देश-विदेशों के जैन तथा अजैन नारी-नर।। (2)

पद्मनन्दी देवनन्दी विद्यानन्दी शिष्यवर।
ग्यारह प्रदेश के मेरे भक्त व शिष्य-शिष्या प्रवर।। (3)

राजश्री क्षमाश्री गुप्तिनन्दी व आज्ञासागर शिष्यवर।
सच्चिदानन्दी तीर्थनन्दी आध्यात्मनन्दी शिष्यवर।। (4)

इन सब काम में विशेष सहयोगी सुशील प्रभात वीणा।
कच्छारा सेठी दम्पत्ति गुणपाल पंकज सोहनराज।। (5)

सुवत्सल सुनिधि सुनीति सुवीक्ष लक्ष्मी गुरु चरण।
सोहनलाल अजय दीपेश मणिभद्र मयंक राजन।। (6)

छोटूलाल जयन्त किशोर आशादेवी सह खुशपाल।
रमेश प्रद्युम्न नरेन्द्र यू.एस.ए. महावीर सुरेखा शिष्य प्रवर।। (7)

तथाहि आहार सेवा व्यवस्था करने वाले लाखों जन।
देश-विदेश व मेवाड़-वागड़ के भक्त व शिष्य जन।। (8)

इनके सहयोग सदाशय से हो रहा है ज्ञान प्रचार।
ज्ञानदानी मुद्रक (जन भी) सहयोगी, 'कनकनन्दी' तो अकिञ्चित्कर।। (9)

परसाद 18.3.2013, मध्याह्न 3:00

विषयानुक्रमणिका (गीत)

अ.क्र.		पृ.सं.
	आचार्य कनकनन्दी के आध्यात्मिक गुरुओं की वन्दना,	2
	आचार्य श्री विद्यानन्दजी का पत्र आचार्य कनकनन्दी के लिये	3
	आचार्य कनकनन्दी की आध्यात्मिक यात्रा	4
	मेरी अन्तःचेतना के संदेश एवं आदेश	7
1.	अनुभव ही सच्चा ज्ञान अन्यथा विज्ञापन (प्राक्कथनम्)	8
2.	कविता रचना से प्राप्त अनुभव	10
3.	मेरे (आ. कनकनन्दी के) आध्यात्मिक गुरु गुण वर्णन	10
4.	मेरा परम अन्तिम लक्ष्य	11
5.	मेरी भावना एवं साधना	12
6.	मेरे योग्य त्यजनीय-करणीय एवं वरणीय	13
7.	अजीबो गरीब मेरी प्रवृत्ति	14
8.	पापी-दोषी से भी मैं क्यों नहीं करता हूँ घृणा?	14
9.	अनुभव पाठशाला के नवनीत	15
10.	पश्चात्य के लोगों से मुझे प्राप्त शिक्षाएँ	17
11.	बाह्य प्रभावना मैं क्यों कम करता हूँ?	18
12.	अन्य की संकीर्ण स्वार्थपरता से मुझे प्राप्त शिक्षाएँ	19
13.	मैं दूसरों को उपदेश एवं सुझाव कम क्यों देता हूँ?	20
14.	मेरी भावना एवं व्यवहार	22
15.	मेरी भावना : स्वोपलब्धि एवं विश्व कल्याण	23
16.	प्रतिक्रमण	24
17.	मेरी आध्यात्मिक यात्रा की दैनिन्दनी (डायरी)	26
18.	मेरी साहित्य साधनादि में सहयोगी	29

अनुभव-गीताञ्जली

1.	परमदेव की आराधना (आध्यात्मिक प्रार्थना)	34
2.	मंगलकारी अमंगलहारी की आराधना	34
3.	वेलकम टू यू मॉइ सोल	35
4.	आत्मदेव एवं नवदेवता की प्रार्थना	36

5.	सत्य परमेश्वर की स्तुति	37
6.	अन्तरतम का वेलकम	38
7.	मेरी भावना की भावना	39
8.	मेरी प्रतिज्ञा साधना	40
9.	ब्रह्माण्ड के सर्व जीव प्रति मेरी भावना	41
10.	मेरी मति सन्मति हो, अन्य की सहमति हो या न हो	42
11.	एक अणु का भी ज्ञान नहीं है वैज्ञानिक तक को	43
12.	सहज बालपना का स्मरण	44
13.	मेरे बाल सुलभ भाव-व्यवहार की समीक्षा	44
14.	वर्तमान में ही मोक्ष चाहता हूँ	46
15.	मोक्ष सुख को मुझे पाना ही होगा	47
16.	मेरी आध्यात्मिक भावना	47
17.	मेरी सहज-अस्वीकृति (एलर्जी) प्रकृति	48
18.	मोक्ष में सुख है...इसका विश्वास मैं क्यों करूँ?	49
19.	मेरे पूर्वाभासादि सत्य होने के कारण	50
20.	यथायोग्य बन्धन मुक्त सुख चाहता हूँ अभी	52
21.	मेरी भावी शुद्ध दशा का चिन्तन	52
22.	मेरा आध्यात्मिक चिन्तन	53
23.	मेरा स्व-शुद्धात्मा के अनन्त वैभव का स्मरण	54
24.	मेरी परोपकार की प्रवृत्ति क्यों कार्यकारी नहीं हो पा रही है?	56
25.	मेरी गुण-दोष समीक्षा से लाभान्वित होते हैं कम	58
26.	स्वयं को स्वयं पुरूस्कृत करें	59
27.	स्वयं के द्वारा स्वयं को महान् बनाओ	60
28.	समता/शान्ति में बाधक तत्त्व	61
29.	मानव का सच्चा स्वरूप	61
30.	असाधारण पुरुषों की क्यों होती है अलौकिक वृत्ति?	62
31.	मानसिक जटिलताएँ	63
32.	निन्दा-प्रशंसा के स्वरूप एवं फल	65
33.	वचन असंयम के कारण	66
34.	उठो! जागो! लक्ष्य को प्राप्त करो	67
35.	क्षुद्र मानवकृत सीमा से पार चला	68

36.	जीवन में आध्यात्मिकता की आवश्यकता	68
37.	अधिक सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि-भोग वाले होते है अधिक पापी-दुःखी	69
38.	अंतरंग दूषित भावों की अभिव्यक्ति सत्तादि द्वारा	70
39.	साधु : सामाजिक-कानूनी सीमा से परे	71
40.	प्यार से तन-मन-आत्मा होते हैं स्वस्थ्य	72
41.	लक्ष्य प्राप्ति के उपाय	73
42.	हर जीव सुख क्यों चाहता है?	74
43.	भगवान् के सच्चे भक्त एवं कमबख्त	75
44.	कोई भी कार्य अचानक (अकारण) नहीं होता	75
45.	सर्व अनुशासन के मूल आत्मानुशासन	76
46.	पूजन-प्रार्थना का स्वरूप एवं फल	77
47.	कब ये मानव महान् होगा	78
48.	अप्रसिद्ध अनाम भी अध्यात्म सन्त होते हैं आदर्श	79
49.	स्व-विश्वास ज्ञानाचरण ही मोक्षमार्ग एवं मोक्ष है	80
50.	आधुनिक चार्वाक-म्लेच्छ मानव के भाव व्यवहार	81
51.	प्यारे बच्चों के लिए मेरा सन्देश	82
52.	आदर्श विद्यार्थी के कर्त्तव्य	82
53.	प्यारे बच्चों खेल से अच्छा सीखो	83
54.	सरल रेखा के सम होता है सत्य-न्याय	85
55.	प्राकृतिक सुखी जीवन-स्मरण	87
56.	सदाचार बिना ज्ञान कुज्ञान	88
57.	बातें ही बातें मत करो	89
58.	उपकरणों के सुप्रयोग एवं कुप्रयोग	90
59.	अधिकांश मानव ज्ञानी-गुणी क्यों न होते?	91
60.	प्रिय बच्चों! पतंगबाजी से शिक्षाएँ प्राप्त करो	92
61.	अनेक भाषा-कविता-विषय के ज्ञान से लाभ	93
62.	शिक्षा क्षेत्र-शिक्षितों के कुकृत्य न हो तो कैसे?	94
63.	भोले-भाले लोगों की विशेषताएँ	94
64.	अति सर्वत्र वर्जयते	95
65.	दुष्टता के कारण एवं कर्म	96
66.	मौन की आत्मकथा	97

67.	धूलि की आत्मकथा	98
68.	वन (जंगल) की आत्मकथा	99
69.	प्राचीन या अद्यतन जो श्रेष्ठ व ग्रहणीय	100
70.	हँसी की आत्मकथा	102
71.	क्रम विकास से शुद्धात्मा बनो	104
72.	हिंसा एवं अहिंसा का विश्वरूप	104
73.	कनकनन्दी गुरुदेव का व्यक्तित्व एवं साधना	105
74.	निराले गुरुदेव	106
75.	श्रमणाचार्य श्री कनकनन्दी जी भगवन्त-अनमोल रतन धन खान	107
76.	वैश्विक गुरु श्री कनकनन्दी जी के स्वप्रेरक सहयोग-सेवा कर्त्ता शिष्य वृन्द (अनुमोदना/प्रोत्साहन गीत)	108
77.	गुरु वन्दन/स्तवन	109
78.	आरती श्री कनकनन्दी जी	110
79.	आध्यात्मिक यात्री श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की आरती	111
80.	गुरु गुणगान (आचार्य कनकनन्दी जी के उद्देश्य एवं साधना)	112
81.	मेरे अनुभव की पद्धति तथा कार्य पद्धति	113
82.	मेरे अनुभव से मैंने जो अनुभव किया	114
83.	अनन्त बार कृतकार्य मेरे लिए अकरणीय एक बार भी अकृत कार्य करणीय	116
84.	साधु भौतिक निर्माण नहीं, स्व-निर्माण करते	117
85.	स्व के अतिरिक्त अन्य में मेरी अरुचि क्यों?	118
86.	मेरी भावी-महान् योजनायें	119
87.	मेरा ही मैं कर्त्ता-धर्त्ता-हर्त्ता	120
88.	मान से होती है दिखावा व दिखावे की इच्छा	121
89.	आचरण व अनुभव बिना पुस्तकीय ज्ञान से हानि	122
90.	हमारे गुरुवर जग से निराले	123
91.	मेरी प्रतिज्ञा एवं स्वसंघ के नियम	123
92.	मेरा दीर्घ-एकान्त-मौन से प्राप्त लाभ	125
93.	स्व-भक्त-शिष्यों के लिए मार्गदर्शन एवं शुभकामनायें (विषय-मेरी प्रतिज्ञा एवं स्व-संघ के नियम)	126
94.	आचार्य श्री कनकनन्दी की आध्यात्मिक यात्रा व गुरू	128

आध्यात्मिक प्रार्थना

''परमदेव की आराधना''

(राग : तुम्हीं मेरे मन्दिर....., आत्मशक्ति....., छोटी-छोटी गैया.....)

तू ही मेरा मन्दिर तू ही मेरी मूर्ति...तू ही मेरी पूजा तू ही मेरी प्राप्ति।
पूजक पूज्य तू ही साधक साध्य...गुरु व शिष्य तू ही हे परम/(आत्म) देव!।।
तू ही मेरा रूप मैं ही तू ही...भूत व वर्तमान भविष्यत् तू ही।
कारण कार्य तू ही ध्यान व ध्येय...ज्ञान व ज्ञेय तू ही हे आत्मदेव!।। (1)

तू ही कर्त्ता धर्त्ता तू ही भोक्ता...अशुभ शुभ या शुद्ध स्वरूप।
संसार मोक्ष तू ही दुःख व सुख...विकृत तू ही दुःख संस्कृत सुख।।
राग-द्वेष-मोह तेरा विकृत...सत्य समता शुचि संस्कृत रूप।
जन्म मरण दुःख विकृत फल...चिदानन्दमय संस्कृत फल।। (2)

तेरी प्राप्ति बिना दुःख ही दुःख...तेरी प्राप्ति ही सुख ही सुख।
अनादिकाल से मैंने तुम्हें न पाया...तुम्हारे बिना दुःख अनन्त पाया।।
यह ही विचित्र है ब्रह्माण्ड मध्ये...स्वयं को स्वयं द्वारा न पाया तुम्हें।
अन्य का कर्त्ता धर्त्ता भोक्ता मैं बना...अज्ञान मोह वश तुम्हारे बिना।। (3)

शरीर मन को मैं स्वरूप माना...सत्ता सम्पत्ति भोग स्वरूप माना।
जन्म मरण रोग अपना माना...सत्य शिव सुन्दर तुम्हें न जाना।।
तुम्हारी कृपा से मैं तू ही मैं जाना...तुम्हारी प्राप्ति को ही सर्वस्व माना।
तेरे निमित्त मेरे ज्ञान व ध्यान...'कनकनन्दी' करे तुम्हें प्रणाम
..../('कनक' का तू हो परम प्रणम्य)।। (4)

परसाद 15.2.2013, प्रातः 7.10 (वसन्त पञ्चमी)

मंगलकारी अमंगलहारी की आराधना

(व्यक्तित्व विकास के परम उपाय)

(राग : जय अनुमान....., मंगल भवन....., इतनी शक्ति.....)

मंगल करन अमंगलहारी, सेवहुँ उत्तम भाव दुःखहारी।

सत्य समता शुचि क्षमा मार्दव, धैर्य संयम भाव मम उपकारी।।
तत्त्व सेवन से आत्मविश्वास जगे, अन्धविश्वास व अज्ञान भागे।
क्रोध मान माया लोभ संहारे, हिंसा झूठ चोरी कुशील भी हारे।।
फैशन-व्यसन संक्लेश नशाये, कलह विवाद अशान्ति नशाये।
अपना पराया भेदभाव विनशे, दीन हीन अहं संकीर्ण नशे।।
तुम्हारी कृपा से पाप भी नशे, सातिशय पुण्य उपार्जन होते।
रोग शोक दुःख दारिद्र नशे, आपत्ति-विपत्ति संकट नशे।।
पराया लोक भी अपना होते, निन्दक शत्रु भी मित्र हो जाते।
प्रेम संगठन सौहार्द्र बढ़े, समन्वय सहयोग विकास बढ़े।।
उत्साह शान्ति ध्यान विकसे, स्थिरता एकाग्रता ज्ञान प्रकाशे।
कर्म की निर्जरा होती विशेष, परिणाम शुद्धि होती अशेष।।
आत्मिक शक्ति का विकास होता, कर्मों का नाश अशेष होता।
सच्चिदानन्द रूप प्रगट होता, 'कनक' निज शुद्ध रूप को पाता।।

परसाद 14.2.2013, रात्रि 9:30, माघ शुक्ला पंचमी (बसन्त पंचमी)

वेलकम टू यू मॉइ सोल

(अनेक भाषामयी आध्यात्मिक कविता)

चाल : 1. जिया जाए नाऽऽऽ.....2, 2. हम होंगे कामयाब.....2, 3. रघुपति राघव.....

वेलकम टू यू...वेलकम टू यू...वेलकम टू यू...मॉइ प्युर सोल...
हो ओ मॉइ सोल...प्युर सोल...मॉइ डीयर सोल...वेलकम...
यू ऑर ग्रेटर देन ऑल...3...यू ऑर मॉइ इनर सोल...वेलकम...हो ओ...
सच्चिदानन्द यू ऑर...3...मम अन्तरतर...यू ऑर मॉइ एवर सोल...हो ओ...
तव बिन मैं जीरो...यू ऑर मेरे हीरो...हो मेरे ईश्वर यू ही...हो ओ...
तू ही फैथ व नॉलेज...तू ही कैरेक्टर...ऑल माइट पावर तू ही...हो ओ...
वत्थु स हावो धम्मो...पॉथ ऑफ फ्रीडम...यू ऑर मॉइ फ्यूचर आत्मन्...हो ओ...
यू ऑर मॉइ नेचर...इनफिनिट (हो) पावर...सत्य शिव सुन्दर तू ही...हो ओ...
यू ब्लेस टू मी... ऑइ प्रे टू यू... ऑइ गेइन टू यू सम डे... हो... ओ...
हे! मेरे परमात्मन्...भो! मम निजात्मन्...यू नम्म शुद्धात्मन् मेरे...हो ओ...
यू ऑर मोर सब्स्टेंस...आपण हो वरच्यू...माझे हे! ज्ञान-ध्यान...हो ओ...

ऑइ रिनाउन्स सीन...यू ऑर मॉइ ऐम...लिव ऑल मॉइ क्राइम...शुद्ध कर...हो ओ... ऑल इफोर्ट फॉर यू...कनकमय ही तू...मम परम हो गेइन...हो ओ...

खेरवाड़ा 27.1.2013, मध्याह्न 1:27

विभिन्न भाषीय राग-चाल

1. जन-गण-मन.....
2. इह विधि मंगल.....(आरती)
3. देव माझा विठू सावळ्या.....(मराठी)
4. बाहुबली स्वामी.....(कन्नड़)
5. तेरे प्यार का आसरा.....
6. प्रथम तुला वन्दितो.....(मराठी)
7. इस तन के पंछी रे.....
8. जय गणेश.....3.....देवा.....(आरती)
9. जय जगदीश हरे.....(आरती)
10. मंगल भवन अमंगल हारी.....
11. आत्म शक्ति से.....
12. सायोनारा.....
13. आधा है चन्द्रमा.....
14. मेरे नैना सावन भादो.....
15. शोधिशी मानव.....
16. चाँद सी मेहबूबा.....
17. मैली चादर ओढ़ के.....
18. ऐ मेरे वतन के लोगों.....
19. ऐ वतन! ऐ वतन!
20. माइन माइन.....
21. भातकुली च्या खेळ्या.....(मराठी)
22. होनी को अनहोनी.....
23. तुम पास आए.....
24. ओ जगत् के शान्तिदाता.....
25. सत्यं शिवं सुन्दरम्.....
26. मुझे ऐसा वर दे दे.....
27. तुम दिल की धड़कन में.....
28. ऐ मेरी आँखों के.....
29. तू इस तरा से मेरी.....
30. जीना यहाँ मरना यहाँ.....
31. छूकर मेरे मन को.....
32. ऐ मालिक तेरे बन्दे हम.....
33. होठों को छू लो तुम.....
34. ओ वसन्ती पवन पावन.....
35. गजानना श्री गणराया.....(मराठी)

आत्मदेव एवं नवदेवता की प्रार्थना

(आत्मदेव की प्राप्ति हेतु नवदेवता के वन्दन)

(राग : तुम दिल की धड़कन में.....)

शत-शत वन्दन हे आत्मदेव!...शत-शत वन्दन हे परम देव!

वन्दन तुमको है बारम्बार...वन्दन तुमको अनन्त बार।।ध्रु.।।
तेरे निमित्त ही धर्म व मोक्ष...तेरे निमित्त ही महान् लक्ष्य।
तेरे निमित्त ही ध्यान व त्याग...तेरे निमित्त ही उत्तम भाव।।
तेरे निमित्त ही परमेष्ठी पूजन...तेरे निमित्त ही दया तप व दान।
उत्तम-मंगल-स्मरण तव निमित्त...वन्दन/(शरण) नवदेव तव निमित्त।।
सिद्ध शुद्ध परमेष्ठी तव वन्दन...तेरी महानता का अभिनन्दन!
परम आदर्श तुम ही हो मेरे...तव सम बनना ही लक्ष्य है मेरा।।
अरिहन्त परमेष्ठी को हो मेरा वन्दन...आपसे प्राप्त हुआ अध्यात्म/(सम्पूर्ण) ज्ञान।
सशरीरी आप हो परमात्मदेव/(परमात्ममय)...अनन्तज्ञानदर्श सुखवीर्यमय।।
आचार्य देव को मैं करूँ नमन...जिनसे प्राप्त होता प्रत्यक्ष ज्ञान।
आचरण सह आचरण कराते...शिक्षा दीक्षा दे जो भव्यजन तारते।।
उपाध्याय परमेष्ठी हो ज्ञान के धनी...स्व-पर मत के आप हो ज्ञानी।
अध्ययन-अध्यापन में आप प्रवीण...आपके चरणों में मेरा वन्दन।।
आत्मसाधना में रत साधु महान्...समता मौनपूर्वक करो हे! ध्यान।
पंचपरमेष्ठियों में प्रथम स्थान...निस्पृह निराडम्बरी को प्रणाम।।
जैनधर्म को मेरा सदा प्रणाम...जिससे विश्व का होता कल्याण।
जिनवाणी माता को सदा वन्दन...जो मुझे करती है ज्ञान प्रदान।।
जिनचैत्य को मैं करूँ वन्दन...स्थापना निक्षेप में जिन समान।
जिनचैत्यालय की करूँ वन्दना...जहाँ पर होती जिनमूर्ति स्थापना।।
तद्गुणलब्धि हेतु मैं करूँ वन्दना...ख्याति पूजा लाभ की नहीं कामना।
मैं पाऊँ मेरा रूप आनन्दघन...इसलिये 'कनक' करे वन्दन।।

छाणी 29.12.2012, रात्रि 10:48

सत्य परमेश्वर की स्तुति

(राग : चौपाई.....जय हनुमान ज्ञान गुण.....)
सत्य सनातन है विश्वरूप, लोकालोक में व्याप्त स्वरूप।
जीव-अजीव है तेरा स्वरूप, ज्ञान-ज्ञेय भी तेरा रूप।।
जीव पुद्गल धर्म अधर्म रूप, काल आकाशमय द्रव्य रूप।
आस्रव बन्ध संवर रूप, निर्जरा मोक्ष है तत्त्व रूप।।

पुण्य-पाप युक्त पदार्थ रूप, शुद्ध-अशुद्ध व व्यवहार रूप।
मौलिक रूप है शुद्ध स्वरूप, मिश्र अवस्था है अशुद्ध रूप।।
लोक प्रचलन है व्यवहार रूप, सामाजिक मर्यादा कानून रूप।
हितमितप्रिय वचन रूप, पावन भावना है भाव रूप।।
सद्भाव रूप है सत्य स्वरूप, उत्पाद व्यय ध्रौव्य रूप।
सत्य परमेश्वर तेरा रूप, सर्वज्ञ द्वारा ज्ञात स्वरूप।।
अल्पज्ञ जाने आंशिक रूप, प्रमाण नय से अभिहित रूप।
अनेकान्तमय तेरा स्वरूप, अनन्त गुण पर्याय रूप।।
स्याद्वाद द्वारा कथित रूप, अनुभव गम्य तेरा स्वरूप।
तेरे बिना सर्व असत्य रूप, तेरे में प्रतिष्ठित विश्व स्वरूप।।
तुझे ही पूजते साधु सन्त, दार्शनिक वैज्ञानिक न्यायाधीश।
तुझमें होती है अनन्त शक्ति, तेरे आश्रय से होती प्रगति।।
जो जीव तेरा निरादर करे, अवश्य स्वयं का विनाश करे।
'कनकनन्दी' तेरा परम भक्त, तेरा ही आश्रय लेता सतत्।।
तेरा आशीर्वाद से व्यस्त व मस्त, तेरी उपलब्धि ही परम लक्ष्य।
तेरे बिन 'कनक' न अन्य को माने, तेरे सहित 'कनक' सबको माने।।
(इस कविता संबंधी विशेष परिज्ञान हेतु कवि द्वारा रचित कृति 'सत्य परमेश्वर' एवं 'अनन्त परम सत्य का उल्लेख संभव नहीं है विज्ञान तथा धार्मिक ग्रंथों से' 'करो साक्षात्कार यथार्थ सत्य का' आदि का अध्ययन करें)।

बावलवाड़ा 7.12.2012, प्रातः 6:54

अन्तरतम का वेलकम

बहुभाषीय (प्रायः 13-14 भाषा सह) स्वागतम्

(विशेषता : विविध राग-चाल-भाषा-भाव-नृत्य-अभिनय युक्त स्वागत गीत आध्यात्मिक प्रार्थना/स्तुति, आरती, कीर्तन, गजल, शास्त्रीय गीत।)

आसन्तु महानुभाव/(मेरे सर्वस्व)/(मम अन्तरतम)
मोर हृदये/(घर में) आपण।
स्वागत/(प्रार्थना/आरती/कीर्तन/पूजन) करूँ छु मूँ

तोमार (श्री) पद्म चरण।।

यू ऑर मम/(माई) फादर एण्ड आलसो मदर।

यू ऑर टीचर/(गॉड/बॉस) व सुपर पॉवर।।

नम्म परम बन्धु/(बडियार) मत्तु/(आणि) सिस्टर ब्रदर/(भाईजान)

यू ऑर/(तू ही) पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट (व) फ्यूचर।।

णाण दंसण चरण/(रत्नत्रयपाथ) आपण ही मोर।

साधन साध्य लक्ष्य प्राप्य भी मोर/(एवर)।।

जवळ सुदूर इनर (अंतरंग) एराउण्ड यू ही।

अस्ति नास्ति अव्यक्तव्य अनन्य तू ही।।

सच्चिदानन्द मारो ऑल माइट सोल।

'कनकनन्दी' के तू ही इनरमोस्ट सोल।।

छाणी 14.1.2013, रात्रि 9.07

विभिन्न राग-चाल-भाव

1. आत्म शक्ति से ओतप्रोत.....
2. चाँद सी मेहबूबा.....
3. नीले गगन के तले.....
4. ऐ मेरे प्यारे वतन.....

''मेरी भावना की भावना''

तर्ज : तेरे प्यार का आसरा चाहता हूँ.....

मेरी भावना की मैं, भावना भाता हूँ।

समता शांति की मैं, भावना भाता हूँ।।

निज उपलब्धि की ही मैं, भावना भाता हूँ।

चिदानन्द बनने की, साधना करता हूँ।।

इसी हेतु द्रव्य क्षेत्रकाल चाहता हूँ।

साधना के अनुकूल शक्ति चाहता हूँ।।

अन्य सब संकल्प चिन्ता त्यागता हूँ।।

अन्य हेतु संक्लेशित न, होना चाहता हूँ।।

सत्य परिज्ञान हेतु (मैं), यत्न करता हूँ।

सनम्र सत्यग्राही मैं, होना चाहता हूँ।।

अन्य से अप्रभावित मैं होना चाहता हूँ।
शिक्षा तो सभी से मैं लेना चाहता हूँ।।
सत्ता सम्पत्ति बुद्धि से न मोह करता हूँ।
सत्य साम्य सुभावना सदा चाहता हूँ।।
संकीर्ण कट्टर ईर्ष्या घृणा त्यागता हूँ।
इससे युक्त व्यक्ति से साम्य रखता हूँ।।
कषाय उत्पादक संग त्यागता हूँ।
व्यक्ति समाज व क्षेत्र त्यागता हूँ।।
स्व-स्व स्वार्थ हेतु, सभी ही तत्पर हैं।
संकीर्ण धन मान मन में निर्भर है।।
परमार्थ हेतु ही मैं भी तत्पर हूँ।
निस्पृह निरापेक्ष भाव निर्भर हूँ।।
अविकारी अविचल तटस्थ होता हूँ।
'कनकनन्दी' निज स्वभाव पाता हूँ।।
संशय विभ्रम रिक्त यह भाता हूँ।
अनुभव लक्ष्य युक्त यह भाता हूँ।।

परसाद 24.2.2013, मध्याह्न 1:00

मेरी प्रतिज्ञा साधना

(राग : बंगला राग.....वन्दूँ भावे तो अरिहन्त..... (मराठी), शत-शत वन्दन.....
मेरी प्रतिज्ञा का मैं ध्यान रखता हूँ, प्रतीक्षा के अनुसार काम करता हूँ।
परम प्रतिज्ञा मेरी आत्मोपलब्धि की, अन्य प्रतिज्ञा मेरी तद्नुकूल की।।
गृहस्थ अवस्था का त्याग किया हूँ, नवकोटि से उसे त्याग किया हूँ।
मन वचन काय (व) कृत कारित से, सम्बन्ध नहीं मेरा अनुमत से।।
तथाहि अन्य सब गृहस्थ कार्य है, त्याग मेरा सांसारिक कार्य है।
तथाहि परिवार समाज राष्ट्र के, पापात्मक सर्व कार्य त्यागा है विश्व के।।
स्व-पर विश्व का मैं मंगल चाहता हूँ, नव कोटि से भी इसे पालता/(करता) हूँ।
राग-द्वेष-मोह से रिक्त करता हूँ, समता शान्ति से युक्त करता हूँ।।
ख्याति-पूजा-लाभ से दूर रहता हूँ, चन्दा चिट्ठा याचना नहीं करता हूँ।

भौतिक निर्माण भी नहीं करता हूँ, संकीर्ण भाव से परे रहता हूँ।।

अपना पराया भेद-भाव नहीं है, धनी-गरीब का भेद नहीं है।

आकर्षण-विकर्षण परे रहता हूँ, वात्सल्य-एकता से युक्त रहता हूँ।।

सनम्र सत्यग्राही सदा रहता हूँ, बालक विद्यार्थी सम रहता हूँ।

निष्पृह निष्पक्ष साक्षी रहता हूँ, सरल-सहज सादा रहता हूँ।।

पर निन्दा प्रपञ्च से दूर रहता हूँ, दबाव प्रलोभन से रिक्त रहता हूँ।

ध्यान-अध्ययन में रत रहता हूँ, शोध-बोध लेखन में रत रहता हूँ।।

देश-विदेशों में जो काम हो रहे है, स्वेच्छा से शिष्य भक्तों द्वारा वे हो रहे हैं।

आशीर्वाद प्रशिक्षण मैं दे रहा हूँ, निस्पृह भाव से ही कर रहा हूँ।।

मेरी प्रतिज्ञा को मैं पाल रहा हूँ, भक्तों से सहयोग पा रहा हूँ।

अनुकूल क्षेत्रादि में रह रहा हूँ, आत्मा की साधना मैं कर रहा हूँ।।

परसाद 25.2.2013, मध्याह्न 3:18

ब्रह्माण्ड के सर्व जीव-प्रति मेरी भावना

(राग : आत्म शक्ति से.....)

ब्रह्माण्ड के हर जीव प्रति ही करता हूँ मैं शुभ भावना।

मैत्री प्रमोद कारूण्य व माध्यस्थ रूपी शुभ भावना।।ध्रु.।।

हर जीव प्रति मैत्री भावना, न किसी के प्रति वैर भावना।

नवकोटी से किसी के प्रति भी, नहीं करता हूँ कटु भावना।।

गुणीजन प्रति प्रमुदित भाव, मेरा रहता है सदा सर्वदा।

जो उदार समताधारी, दया दान सेवा सत्य तत्पर।। (1)

करूणाभाव होता है उन पर, जो अज्ञानी व दीन-हीन।

सत्य सदाचार दान सेवा रहित, फैशन-व्यसनों में व्यस्त जीवन।।

माध्यस्थ भाव रखता हूँ उन पर, जो मुझसे न रखे सद्भाव।

राग-द्वेष-वैर भाव न रखता, रखता हूँ सदा समता भाव।। (2)

जो सत्ता सम्पत्ति बुद्धि प्रसिद्धि, प्राप्ति से बनते है मदमस्त।

दान दया परोपकार से रहित, उनको न मानता हूँ श्रेष्ठ।।

सत्ता सम्पत्ति आदि से (भी) रहित, जो होते (हैं) सरल सहज।

उनके प्रति भी मेरा होता, आदर जो होते हैं नम्र सज्जन।। (3)

ईर्ष्या-घृणा-राग-द्वेष सहित, जो पालते हैं धर्माचार।

उनसे भी मैं माध्यस्थ रहता उनके प्रति न होता आदर।।

अधिकांश जन होते हैं पाखण्डी, घमण्डी तथा कूट-कपटी।

प्रमोद भाव न होता उनसे, उनसे रखता हूँ माध्यस्थ वृत्ति।। (4)

सोचता हूँ सदा हर जीवन बने, सत्यग्राही व गुणी ज्ञानी।

उदार सहिष्णु परोपकारी, निरोगी सुखी आत्मध्यानी।।

विश्व में हो सत्य समता शान्ति मैत्री व सदाचार।

कनकनन्दी की भावना सदा, सबको मिले मोक्ष मन्दिर।। (5)

छाणी 29.12.2012, रात्रि 4:00

(आर्यिका सुविधेयमती माताजी की भावना से यह कविता बनी)

''मेरी मति सन्मति हो, अन्य की सहमति हो या न हो''

(राग : रघुपति राघव राजा....., तुम दिल की धड़कन.....)

मेरी मति सन्मति सतत् हो, मैं ऐसी भावना भाता हूँ।

सहमति अन्य की अनिवार्य हो, ऐसा विचार न रखता हूँ।।ध्रु.।।

जीव अनन्त व अनेक कर्म सह, असंख्यात प्रमाण भी भाव होते।

तद्नुकूल भी परिणाम सह होते, मेरे भावानुसार न सभी होते।।

अधिकांश जीव न होते महान्, भाव व लक्ष्य भी न होते महान्।

अनुभव भी नहीं होता श्रेष्ठ, व्यवहार भी नहीं करते ज्येष्ठ।। (1)

संकीर्ण स्वार्थी अनुदार होते, ईर्ष्या-घृणा-द्वेष युक्त होते।

हिताहित विवेक रहित होते, दूर दृष्टि से भी रहित होते।।

सत्यग्राही विनम्र भी नहीं होते, शोध-बोध सहित नहीं होते।

धीर-वीर-गंभीर भी नहीं होते, गहन सूक्ष्म विचार रहित होते।। (2)

देखादेखी नकलची प्रायः होते, छिद्रान्वेषी भी निन्दक होते।

निषेध परक भाव युक्त होते, तर्क गणित भाषा को नहीं जानते।।

दर्शन विज्ञान से अज्ञ होते, अलौकिक गणित से शून्य होते।

आध्यात्मिक रहस्य से रहित होते, भौतिक भोगवादी व अज्ञ होते।। (3)

शुतरमुर्ग गिरगिट सम होते, मच्छर जोंक के समान होते।

बिना पेंदी के लोटे सम होते, प्रामाणिकता से भी रहित होते।।

अतएव मेरी मति हो सन्मति, अन्य की अनिवार्यता नहीं सहमति।
'कनक' शिक्षा मैं स्वीकार करूँ, महापुरुषों की सहमति ग्रहण करूँ।। (4)

अन्य की सहमति से ही महान् जन, हर महान् काम भी नहीं करते।
सामान्य जन से परे वे काम करते, असाधारण काम वे कर पाते।।

अलौकिक वृत्ति भी मुनि की होती, साधारण न होते महान् जन।
सामान्य जन से वे अगम्य होते, अतएव सहमत भी नहीं होते।। (5)

बावलवाड़ा 16.12.2012, रात्रि 8:55 तथा 12:12

(स्वात्म सम्बोधन)

एक अणु का भी ज्ञान नहीं है वैज्ञानिक तक को

(हे कनकनन्दी! आपको एक परमाणु का भी पूर्ण ज्ञान नहीं, अतः सर्वज्ञ बनो)

(राग : तू हिन्दू बनेगा न मुसलमान....., हम लाये हैं तूफान से....., दुनियाँ में हम आये हैं.....)

एक भी परमाणु का ज्ञान सभी को न होता, सर्वज्ञ के अतिरिक्त अन्य को न होता।
अनन्त गुण पर्याय होते एक अणु में, उसे जानने की योग्यता होती केवली में।।ध्रु.।।

केवलज्ञान में ही अनन्त योग्यता होती, सर्वज्ञ की योग्यता अनन्त है होती।
अतः सर्वज्ञ अणु को पूर्णतः जानते, दार्शनिक वैज्ञानिक तक अपूर्ण जानते।।

अवधि मनःपर्ययी असंख्यात जानते, मति श्रुतज्ञानी संख्यात तक ही जानते।
गणधर तक असंख्यात तक ही जानते, विशेष मानव देव तक अवधि ज्ञानी होते।।

एक परमाणु को भी जब कोई न जान पाते, देव से मानव तक न जान पाते।
दार्शनिक वैज्ञानिक भी न जान पाते, सामान्य विद्वान् साधु न जान पाते।।

अतएव 'कनकनन्दी' तक होते छद्मस्थ, अल्पज्ञ असर्वज्ञ कर्मबन्धन बद्ध।
पूर्ण ज्ञान हेतु सबको करना है प्रयत्न, 'कनकनन्दी' इसी हेतु सदा प्रयत्न।।

स्वात्मा के पूर्ण ज्ञान से होते हैं सर्वज्ञ, राग-द्वेष-मोह त्याग से होते हैं सर्वज्ञ।
रागादि नाश से कर्मों का विनाश होता, कर्म नाश से ही जीव सर्वज्ञ भी होता।।

बावलवाड़ा 19.12.2012, मध्याह्न - प्रायः 2:50

''सहज बालपना का स्मरण''

(बड़े आदमी की आत्मालोचना)

(बड़े होकर अधिकांश लोग बिगड़ते क्यों?)

(राग : आत्मशक्ति से....., जिन्दगी इक सफ़र.....)

बड़ा होकर मैं क्या हो गया?...मानव से दानव क्यों बन गया?
बचपन का भोलापन कहाँ गया?...बड़ा होने से मदमस्त हो गया।।ध्रु.।।

बड़ा होने से बड़प्पन आना चाहिये...सादा जीवन उच्च विचार आना चाहिये।
परन्तु दम्भमय मेरा जीवन हो गया...दिखावा में उच्च भाव नीच हो गया।।
आयु बढ़ी बुद्धि बढ़ी पढ़ाई भी बढ़ी...सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि क्षमता बढ़ी।
किन्तु भावना मृदुता सहजता घटी...ईर्ष्या घृणा कुटिलता कामुकता बढ़ी।।
फैशन-व्यसन भोग-उपभोग भी बढ़े...मान-सम्मान व प्रभाव भी बढ़े।

किन्तु शान्ति प्रसन्नता हँसी क्यों घटी?...एकाग्रता निद्रा व मस्ती क्यों घटी?
जान-पहचान यातायात भी बढ़े...लेन-देन काम-धंधा व्यापार बढ़े।
प्रेम मैत्री संगठन वात्सल्य घटे...भेदभाव गुटबाजी वैरत्व बढ़े।।
मैं इसके कारणों को ढूँढ रहा हूँ...मेरे कर्म संस्कार भाव को पाता हूँ।
द्रव्य-क्षेत्र-काल को बाह्य में पाता हूँ...शिक्षा समाज व संगति को पाता हूँ।।

मेरी साधना की कमी प्रमुख तत्त्व...दृढ़ता की कमी भी प्रमुख तत्त्व।
जिससे बाह्य कारक कर रहे हैं परास्त...जिससे मेरे अच्छे गुण हो रहे नष्ट।।
अभी दृढ़ साधना से विजयी बनूँगा...श्रमण सम बालकवत् बनूँगा।
सरल सहज विनम्र पवित्र बनूँगा...'कनकनन्दी' के सम प्रतिज्ञा पालूँगा।।

बावलवाड़ा 19.12.2012, रात्रि 10:09

''मेरे बाल सुलभ भाव-व्यवहार की समीक्षा''

(मेरे बाल सुलभ अधिकांश भावादि बढ़े, कुछ में ही परिवर्तन हो रहे हैं)

(राग : यमुना किनारे श्याम....., छोटी-छोटी गैया.....)

बाल सुलभ मेरे जो भाव रहे हैं, तदनुकूल जो व्यवहार रहे हैं।
उसमें जो वृद्धि हानि हुई है, उसकी समीक्षा की कविता बनी है।।

''बालकवत् जैन साधु'' मैं पढ़ा हूँ, उसकी तुलना मैं कर रहा हूँ।
द्रव्य-क्षेत्र काल-भाव (के) अनुसार, कर रहा हूँ सुयोग्य यत्नाचार।। (1)
बाल्यकाल से ही सत्यग्राही रहा हूँ, सत्य जिज्ञासु सत्साहसी रहा हूँ।
उत्साहवान् कर्त्तव्यशील रहा हूँ, एकाग्रमना-उच्चाभिलाषी रहा हूँ।।
अध्ययन मनन व प्रश्न करता, परीक्षण-निरीक्षण व प्रयोग करता।
लेखन संभाषण भाषण करता, वाद-विवाद में भाग भी लेता।। (2)
असत्य-अन्याय-अत्याचार न सहता, ईर्ष्या-द्वेष-घृणा-तृष्णा न करता।
भेद-भाव व पक्षपात न करता, सनम्र सत्यग्राही उदार रहता।।
कूट-कपट-मायाचारी न करता, लन्द-फन्द संक्लेश न करता।
संतोष निस्पृह निराडम्बर रहता, झगड़ा कलह विकथा न करता।। (3)
प्रसन्नचित्त सह बहुत हँसता, दूसरों के दुःख से बहुत (ही) रोता।
सज्जन-मित्रों से चर्चा भी करता, जोर से उनकी पीठ थपथपाता।।
मेरे बड़े लक्ष्य तीन भी रहे हैं, मानव सेवा हेतु नेता के रहे हैं।
सत्यज्ञान हेतु विज्ञानी रहे हैं, आत्मज्ञान हेतु संत के रहे हैं।। (4)
कम भी बोलता एकान्त में रहता, कम भी खाता अधिक न सोता।
अधिक अध्ययन निरीक्षण करता, चिन्तन अध्यापन लेखन करता।।
फैशन-व्यसनों से रहित रहा हूँ, गंभीर शान्त शालीन रहा हूँ।
परोपकारी व कृतज्ञ रहा हूँ, अनुभव सहित विवेकी रहा हूँ।। (5)
उपरोक्त सद्गुण बढ़ रहे हैं, दीक्षा-शिक्षा सह बढ़ रहे हैं।
आयुवृद्धि के साथ बढ़ रहे हैं, किंचित् ही परिवर्तन (भी) हो रहे हैं।।
पीठ थपथपाना छोड़ दिया हूँ, प्रशंसा अनुमोदना कर रहा हूँ।
वाद-विवाद को छोड़ दिया हूँ, अनेकान्त समन्वय कर रहा हूँ।। (6)
तीनों लक्ष्य मेरे बढ़ गये हैं, विश्वकल्याण के भाव घनेरे।
परम सत्य ज्ञान शोध रहा हूँ, आत्मविशुद्धि में लगा हुआ हूँ।।
विद्यार्थियों को पढ़ाना कम हुआ है, साधु-विद्वानों का बढ़ रहा है।
देश में प्रभावना मन्द रही है, विदेशों में प्रभावना बढ़ रही है।। (7)
सहयोग स्वेच्छा से बढ़ रहा है, समाज का खर्च घट रहा है।
भीड़ से अधिक भक्त बन रहे हैं, भक्त से अधिक शिष्य बन रहे हैं।।
शोध-बोध मेरा बढ़ रहा है, समता शान्ति भी बढ़ रही है।

कविता की रचना बढ़ रही है, कल्पना समीक्षा बढ़ रही है।। (8)
कुछ काम मुझे नहीं भी आते, ताश-जुआ खेल सट्टा न आते।
खाना बनाना व गप्पे न आते, निन्दा व व्यंग व्याज न आते।।
मेरी कमी से मुझे लाभ ही होते, दुर्गुण कमी से सुगुण बढ़ते।
त्याग व साधना से सिद्धि मिलती, सिद्धि हेतु 'कनक' की साधना होती।।
अपेक्षा प्रतीक्षा भी घट रही है, समता निस्पृहता बढ़ रही है।
एकान्त साधना भी बढ़ रही है, एकाग्रता शान्ति बढ़ रही है।।
मुझे ही मुझे पाना मेरा है लक्ष्य, उसी हेतु मेरा सर्व प्रयत्न।
समस्त बंधन मैं दूर करूँ, परम स्वतंत्र मय स्वयं को करूँ।। (10)

बावलवाड़ा 11.12.2012, रात्रि 12:17

(यह कविता श्रमणी सुनीतिमती माताजी की जिज्ञासा के कारण बनी)

''वर्तमान में ही मोक्ष चाहता हूँ''

(राग : तेरे प्यार का आसरा.....)

इसी भव में ही मैं मोक्ष चाहता हूँ, यथासंभव हो मैं मुक्ति चाहता हूँ।
आज से ही अभी से ही मोक्ष पा रहा हूँ, अनर्थदण्ड से मैं मुक्त हो रहा हूँ।।
अनावश्यक कार्य सर्व त्यागता हूँ, सामाजिक लन्द-फन्द सभी त्यागता हूँ।
परनिन्दा संक्लेश मैं सभी त्यागता हूँ, अपेक्षा-प्रतीक्षा से विमुक्त होता हूँ।।
अन्य के कर्त्ता-भोक्ता से मुक्त होता हूँ, स्वात्म शोध-बोध में ही युक्त होता हूँ।
अन्धानुकरण से भी मुक्त होता हूँ, पर प्रतिस्पर्द्धा से भी रिक्त होता हूँ।।
ख्याति पूजा लाभ से भी मुक्त होता हूँ, आत्मप्रभावना से मैं युक्त होता हूँ।
विश्वकल्याण की मैं भावना भाता हूँ, परसंक्लेश से मैं मुक्त होता हूँ।।
शत्रु-मित्र बंधन से मुक्त होता हूँ, समता व वात्सल्य से युक्त होता हूँ।
पर से अप्रभावित होता जा रहा हूँ, मैत्री प्रमोद दया से युक्त होता हूँ।।
मोही रागी द्वेषी से (मैं) साम्य रहता हूँ, दुष्ट पापियों को भी (मैं) क्षमा करता हूँ।
दबाव प्रलोभन से (मैं) मुक्त होता हूँ, धन-जन-मान से मैं नहीं बँधता हूँ।।
अहं-दीन ग्रन्थी से (मैं) मुक्त होता हूँ, स्वाभिमान सोऽहं भाव सह होता हूँ।
सोऽहं से अहंमय होना चाहता हूँ, शुद्ध-बुद्ध नित्यानन्द होना चाहता हूँ।।
तन-मन अक्षातीत होना चाहता हूँ, कनक नित्य/(जीवन) मुक्त होना चाहता हूँ।

परसाद 18.2.2013, प्रातः 6:58

''मोक्ष सुख को मुझे पाना ही होगा''

(राग : परदेसियों से....., झिलमिल सितारों.....)

दुःखों से निवृत्त होना ही होगा...आत्मिक सुख को पाना ही होगा।
समस्त विभावों को त्यागना होगा...आध्यात्मिक विशुद्धि को पाना ही होगा।।ध्रु.।।
आत्मविश्वास सहित होना ही होगा...सत्य-तथ्य परिज्ञान करना होगा।
पाप त्याग व शुभ करना होगा...शुभ से शुद्ध को पाना ही होगा।।
द्रव्य से मैं जीव द्रव्य मानना होगा...सिद्ध समान शुद्ध मानना होगा।
हेय-ज्ञेय-उपादेय जानना होगा...हेय त्याग उपादान गहेना होगा।। (1)
राग-द्वेष-मोह को त्यागना होगा...फैशन-व्यसन पाप त्यागना होगा।
संकल्प-विकल्प क्लेश छोड़ना होगा...आकर्षण-विकर्षण त्यागना होगा।।
सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि त्यागना होगा...अपना-पराया भेद मिटाना होगा।
शत्रु-मित्र भेद-भाव छोड़ना होगा...दीन-हीन अहंभाव छोड़ना होगा।। (2)
समता-शान्ति से ध्यान करना होगा...आत्मविशुद्धि से श्रेणी चढ़ना होगा।
घाति-कर्मों का घात करना होगा...अनन्त चतुष्टय को पाना ही होगा।।
योग-निरोध से शैलेश बनना होगा...अघाति कर्मों को नाश करना होगा।
सच्चिदानन्द अमूर्तिक बनना होगा...'कनक' परम लक्ष्य को पाना ही होगा।। (3)

छाणी 12.1.2013, प्रातः 7:17

''मेरी आध्यात्मिक भावना''

(राग : दे दी हमें आजादी.....)

मेरी भावना है मैं मुझको मुझमें पाऊँ, सारे सम्पर्क को मुझसे ही मैं नशाऊँ।
स्वयं का कर्त्ता-भोक्ता मैं ही बन जाऊँ, अन्य के कर्त्ता-भौक्ता बन्धन नशाऊँ।।ध्रु.।।
''मेरी आध्यात्मिक भावना.....sss''
संकल्प-विकल्प व संक्लेश नशाऊँ, सच्चिदानन्दमय सिद्धत्व मैं पाऊँ।
क्रोधमानमायालोभ मिथ्यात्व नशाऊँ, अनन्तज्ञानदर्शनसुखवीर्य मैं पाऊँ।।
अतएव ख्याति पूजा लाभ मैं न चाहूँ, अपना-पराया भेदभाव न चाहूँ।
शत्रु-मित्र हानि-लाभ मान-अपमान, धनी-गरीब सबमें समता चाहूँ।।
एकान्त मौन में साधना मैं चाहूँ, तन-मन-आत्मा का स्वास्थ्य मैं चाहूँ।

बाह्य तप त्याग शक्ति से मैं करूँ, आत्मविशुद्धि हेतु प्रयत्न विपुल करूँ।।
दिखावा ढोंगाचार प्रपंच न करूँ, अन्य के देखादेखी साधना न करूँ।
मन्दिर मूर्ति मठ निर्माण न करूँ, स्व-निर्वाण हेतु निर्माण मैं करूँ।।
ईर्ष्या तृष्णा प्रतिस्पर्द्धा विवाद न करूँ, सत्य समता शान्ति व समन्वय करूँ।
संग्रह चन्दा चिट्ठा व याचना न करूँ, निस्पृह विरक्त अनाम पावन मैं रहूँ।।
समस्त परभाव विभाव नशाऊँ, समस्त स्वभाव वैभव को मैं पाऊँ।
'कनक' कामिनी कीर्ति-कर्मों को नशाऊँ, अमूर्त अमृत रूप चिदानन्द मैं चाहूँ।।

छाणी 11.1.2013, प्रातः 6:28 से 7:02

''मेरी सहज अस्वीकृति (एलर्जी) प्रकृति''

(मेरे लिये सहज स्वीकार्य एवं अस्वीकार्य)

(राग : शत-शत वन्दन....., तुम दिल की धड़कन.....)
मेरी अस्वीकृति (एलर्जी) प्रकृति का...कर रहा हूँ मैं वर्णन।
तन-मन-अक्ष-वचन आत्मा की...अस्वीकृति-प्रकृति निदान।।ध्रु.।।
शारीरिक प्रकृति मेरी है...हाइपर एसिडिटी की।
मानसिक प्रकृति मेरी है...ध्यान-अध्ययन-मनन की।।
इन्द्रियों की मेरी प्रकृति है...संवेदनशील सूक्ष्मग्राही।
वाचनिक प्रकृति मेरी है...हित-मित-प्रिय बोलने की।।
आत्मा की मेरी प्रकृति है...सनम्र-सत्यग्राही-साम्य की।
इन सबके अनुकूल मेरी...होती है सर्व प्रवृत्ति।।
इनसे भिन्न विषय वस्तुओं को...ग्रहण न कर पाते मेरे तनादि।
इनके संयोग से होती समस्यायें...रोगी हो जाते मेरे तनादि/(शरीरादि)।।
मेरा शरीर न स्वीकार करता है...बदबू धुआँ धूली गर्मी को।
भोजन में खट्टा लाल मिर्ची...अधिक नमक दुष्पक्व को।।
मन न स्वीकार करता है...कलह संक्लेश अत्याचार को।
पक्षपात शोर गप्पेबाजी...अन्याय शोषण परदुःखों को।।
इन्द्रियाँ मेरी न स्वीकारती है...गर्मी खट्टी-तीखी बदबू को।
लाल काला व गन्दगी अव्यवस्थित...वस्तु शोर-शराबा को।।
मेरे वचनों को न भाते हैं...अहित मिथ्या अति बोल को।

अव्यवस्थित व तुच्छ भाषा...बार-बार कुछ बोलने को।।
मेरे आत्मा को न स्वीकार है...वैभाविक भाव व्यवहारों को।
विषम संक्लेश विषय कषाय...राग-द्वेष-मोह द्वंद्वों को।।
मेरे लिये तो स्वीकार्य है...स्वच्छ शान्त ग्राम अंचल।
वन उपवन नदी पर्वत...कलरव युक्त वृक्ष जंगल।।
सरस सुमधुर सुपक्व भोजन...पानी घी दूध भाजी फल।
हरी सब्जी व सूखा मेवे...प्राकृतिक भोजन मूँगदाल।।
शान्त सरल भोले-भाले लोग...साधु प्रकृति सज्जन।
हँसते खेलते प्रिय बच्चे...निस्पृह शान्त साधुजन।।
धीर-वीर-गम्भीर ज्ञान-ध्यान...योग्य मेरी प्रवृत्ति।
सत्य-साम्य-शान्ति-स्वास्थ्य...योग्य मेरी प्रकृति।।
ध्यान-अध्ययन-मनन-चिन्तन...आध्यात्मिकमय धर्म।
निस्पृह निराडम्बर समतामय...प्रेम समन्वय कर्म।।
भौतिकता व फैशन-व्यसन...भेड़ व भेड़िया की चाल।
इसी से भिन्न भाता है...वैज्ञानिक प्रगतिशील।।
उदारमय भावना सहित...दया दान सेवा उपकार।
''कनक'' को वे सब स्वीकार्य...जो होते हैं मंगलकर।।

छाणी 29.12.2012, रात्रि 1:59

''मोक्ष में सुख है...इसका विश्वास मैं क्यों करूँ?''

(राग : मोक्ष नगरियाँ प्यारी है.....)
मोक्ष में सुख मिलता है...मिलता है, उसका विश्वास मैं क्यों करूँ?
तर्क-अनुमान-आगम से...आगम से, मोक्ष अनुभव यहाँ/(अभी) भी करूँ।।
सर्व बन्धन के त्याग से...त्याग से, सम्पूर्ण मुक्ति प्राप्ति होती।
शरीर-इन्द्रिय मन से भी...मन से भी, सम्पूर्ण कर्म से मुक्ति होती।।
क्रोध-मान-माया-लोभ से...लोभ से, संक्लेश-क्लेश से मुक्ति होती।
कामासक्ति व मोह भी...मोह भी, विभाव भाव से मुक्ति होती।।
इस आगम के सिद्धान्त...सिद्धान्त, तर्क व अनुभव करता हूँ।
मोक्ष में सुख मिलता है...मिलता है, विश्वास भी दृढ़ करता हूँ।।

शरीर में रोग पीड़ा होती...पीड़ा होती, भूख-प्यास की पीड़ा होती।
शरीर के अभाव से...अभाव से, रोगादि अभावे सुख होगा।।
इन्द्रिय जन्य दुष्कर्म से...दुष्कर्म से, फैशन-व्यसन व पाप होते।
इन्द्रियों से जब मुक्ति होगी...मुक्ति होगी, फैशन आदि से (भी) मुक्ति होगी।।
कषाय कर्म की मुक्ति से...मुक्ति से, उसी के दुःख भी दूर होंगे।
आंशिक मोक्ष भी अभी होता...अभी होता, तद्नुकूल भी सुख होता।।
इसी अनुभव तर्क से...तर्क से, आगम अनुमान योग से।
विश्वास होता मोक्ष-सुख...मोक्ष सुख, अन्ध श्रद्धान नहीं लगता।।
तन-मन-रोग मुक्ति से...मुक्ति से, तनाव-भय की मुक्ति से।
समस्या अशान्ति मुक्ति से...मुक्ति से, अलौकिक भी सुख होता।।
यह अंशाअंशी अनुभव...अनुभव, मोक्ष (सुख) में कनक श्रद्धा लाता।
आगम तर्क व अनुमान...अनुमान, विश्वास दृढ़ीकृत करता।।
अनुभव यदि नहीं होता...नहीं होता, तर्क आदि से विश्वास न होता।
अनुभव प्रत्यक्ष ज्ञान होता...ज्ञान होता, तर्क भी तद्नुकूल होता।।

छाणी 15.1.2013, मध्याह्न 1:21

मेरे पूर्वाभासादि सत्य होने के कारण

(राग : यमुना किनारे श्याम.....)
स्वयं के प्रति मुझे आश्चर्य होता है, कारण अनुसंधान का भाव भी होता है।
पूर्वाभास क्यों मेरे सत्य होते हैं, पूर्व निर्णय चिन्तन क्यों सत्य होते हैं।।
दीर्घ काल से शोध-बोध कर रहा हूँ, स्व-पर-माध्यम से यह कर रहा हूँ।
कारण ज्ञातकर इसे बढ़ा रहा हूँ, निष्पक्ष सत्यग्राही से कर रहा हूँ।। (1)
स्व-अनुसंधान व परिमार्जन हेतु, लिख रहा हूँ आत्मसम्बोधन हेतु।
यह मेरी डायरी या आत्ममंथन कविता, आत्मविश्लेषण की मेरी निज कविता।।
शिक्षा कानून राजनीति मानव विज्ञान, भौतिक रसायन या मनोविज्ञान।
स्व-पर-भारत या विश्व विज्ञान, स्वप्न शकुन या भविष्य ज्ञान।। (2)
भोजन स्वास्थ्य या पर्यावरण ज्ञान, ग्राम नगर या मानसून विज्ञान।
धनी-गरीब साक्षरी निरक्षरी का ज्ञान, हजारों सत्य हुये मेरे भविष्य ज्ञान।।

अन्य के लिये जो होते थे अज्ञात, अविश्वसनीय या होते असत्य।
वे सब मुझे होते तब भी आभास, बताने पर कोई न करते विश्वास।। (3)
अतएव बताना बहुत कम ही किया, लिखित में बहुत मैं वर्णन किया।
जब-जब पूर्वाभास होते हैं सत्य, तब-तब पढ़ाता हूँ मेरा लिखित तथ्य।।
तब अन्य लोग भी उसे सत्य मानते, आश्चर्य सहित गौरव भी करते।
मेरे उत्साह अनुसंधान बढ़ जाते हैं, स्व-प्रति गौरव व आश्चर्य होते हैं।। (4)
पूर्वाभास सत्य के निम्न कारण होते हैं, सत्य जिज्ञासु निष्पक्ष ग्राही होते हैं।
गुणग्राही उदार सहज सरल होते हैं, भेद-भाव रहित साम्यभाव होते हैं।।
पवित्र भाव व उच्च लक्ष्य भी होते, धर्म दर्शन विज्ञान सहित होते।
कर्म सिद्धान्त व मनोविज्ञान सहित, कार्य कारण सम्बन्ध गणित सहित।। (5)
दीनबन्धु व परदुःख कातर होते, विश्वबन्धु विश्वमैत्री भी होते।
आकर्षण-विकर्षण रहित भाव होते, संवेदनशील सूक्ष्मग्राही भी होते।।
तर्क अनुभव व आध्यात्मज्ञान, सापेक्ष सिद्धान्त व आयुर्विज्ञान।
स्वप्न शकुन व अंगस्फूरण, भावात्मक शकुन व अंगविज्ञान।। (6)
इन विषयों को मैं समन्वय करता, गुण-दोषों की मैं समीक्षा करता।
अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा रहित, निर्णय लेता हूँ मैं समता सहित।।
कोई माने या न माने से परे होते, दबाव प्रलोभन भय न होते।
संकीर्ण धर्म-विज्ञान शिक्षा से परे, अन्तः प्रज्ञा को मैं करूँ प्रधान।। (7)
बीज से ही विज्ञ को यथा ज्ञान होता, वृक्ष फूल फल आदि का होता।
तथाहि मुझे अनेक का ज्ञान होता, जिससे पूर्वाभास सही होता।।
इससे सतर्क सहित मैं होता, दूसरों को भी सतर्क मैं करता।
अन्य न सतर्क अधिक होते, रोग व दुःख को अधिक पाते।। (8)
मेरी भावना अन्य न पाये दुःख, पूर्वाभास से रहे सभी सतर्क।
अतएव स्वप्न शकुन अंग विज्ञान, लिखा है अनेक ग्रन्थ स्वास्थ्य विज्ञान।।
पूर्वाभास कथन कम कर रहा हूँ, साधना अधिक मैं कर रहा हूँ।
प्रत्यक्षज्ञान ही मेरा परम लक्ष्य, 'कनक' का लक्ष्य है सकल प्रत्यक्ष।। (9)

छाणी 17.1.2013, रात्रि 10:00

''यथायोग्य बन्धन मुक्त सुख चाहता हूँ अभी''

(राग : तेरे प्यार का आसरा....., मनहरण छन्द.....)

जीवन का हर क्षण (मैं) जीना चाहता हूँ, आनन्द का अनुभव करना/(अभी) चाहता हूँ।
सत्य-समता-शान्ति को पाना चाहता हूँ, सच्चिदानन्दमय होना चाहता हूँ।।ध्रु.।।

इसी जीवन में अभी (ही) मोक्ष चाहता हूँ, यथायोग्य बन्ध से मुक्ति चाहता हूँ।
इसी हेतु संकीर्णता (से) मुक्त होता हूँ, भेद-भाव कुण्ठा से रिक्त होता हूँ।

अहंकार-ममकार त्याग करता हूँ, ख्याति-पूजा-लाभ से परे होता हूँ।
परनिन्दा प्रतिस्पर्द्धा परे होता हूँ, ईर्ष्या-द्वेष-तृष्णा को त्याग देता हूँ।

पक्षपात आकर्षण त्याग देता हूँ, अपेक्षा-प्रतीक्षा से परे होता हूँ।
मोह भ्रम अस्थिरता शून्य होता हूँ, पर से प्रभावित नहीं होता हूँ।

आत्मविश्वासी स्वावलम्बी होता हूँ, आत्मानुशासी धैर्यवान् होता हूँ।
सरल-सहज क्षमावान् होता हूँ, गुणग्राही विनम्री कृतज्ञ होता हूँ।

स्वात्मचिन्तक-आत्मनिष्ठ होता हूँ, स्वात्म गौरवशाली वीतरागी होता हूँ।
संकल्प-विकल्प क्लेश शून्य होता हूँ, ध्यान-अध्ययन से पूर्ण होता हूँ।

विश्वमैत्री भावना से युक्त होता हूँ, विश्वकल्याण भाव से युक्त होता हूँ।
सत्य-शिव-सुन्दरमय मैं ध्याता हूँ, 'कनक' निराकुल सुख पाता हूँ।

आत्मा यदि स्वयम्भू व ज्ञानानन्द है, आनन्द अनुभव करना मेरा धर्म है।
येनांश में स्व-धर्म को मैं पाता जाऊँगा, तेनांश में स्व-सुख को मैं पाता जाऊँगा।

बाल्यकाल से मैं अनुभव कर रहा हूँ, निर्दोष शान्त स्थिति में सुख पाता हूँ।
देश-विदेशों के ग्रन्थों में पढ़ रहा हूँ, जिससे ऐसे भाव मैं कर रहा हूँ।।

बावलवाड़ा 12.12.2012, रात्रि 10:17 तथा 3:48

('आत्मानुशासन की शक्ति' ब्रायन ट्रेसी की पुस्तक से भी प्रेरित यह कविता)

''मेरी भावी शुद्ध दशा का चिन्तन''

(राग : नाम है तेरा तारणहारा.....इतनी शक्ति हमें.....)

तेरे चिन्तन से सुख मिलता...तू कितना सुखमय होगा।
दूर से सूर्य से जब ताप मिलता...सूर्य में कितना ताप होगा।।ध्रु.।।

तेरे ध्यान हेतु एकाग्र चाहिये...तू कितना अविचल होगा।

भेदविज्ञान से तेरा ज्ञान होता...तू कितना ज्ञानवान् होगा।। (1)
तेरे मनन से ही समता जगती...तू कितना साम्यभावी होगा।
तेरा विश्वास आत्मविश्वास जगाता...तेरे में कितना विश्वास होगा।। (2)
तेरे विश्वास से निर्भय (भाव) जगता...तुझमें कितना निर्भय होगा।
तू ही मैं जब श्रद्धान करता...दीन-अहंभाव भागते सब।। (3)
तू ही मेरा भावी स्वरूपमय...मैं ही तेरा भूतस्वरूपमय।
हम दोनों हैं 'अंकुरवृक्ष' सम...पर्यायभेद हैं द्रव्य तो सम।। (4)
लोहा ही चुम्बक बन जाता है...द्रव्यमान तो एक समान है।
ध्याता ही ध्येय है बन जाता...पानी ही बर्फ यथा हो जाता।। (5)
अभेद में हम एक ही दोनों...यह (ही) आध्यात्मिक अमूल्य देन।
'कनक पाषाण' ही बनता 'कनक'...आत्मा-परमात्मा में अभेद दोनों।। (6)

छाणी 9.1.2013, रात्रि 9:43

''मेरा आध्यात्मिक चिन्तन''

(मैं ही मेरे कर्त्ता-कर्म-भोक्ता हूँ)

(राग : तू ही तेरा परम सत्य.....)
मैं ही मेरा परम कर्त्ता हूँ...अन्य तो निमित्त मात्र हैं।
शुभाशुभ या शुद्धभाव...तथा ही उसके फल के।।ध्रु.।।
यथा ही बीज अंकुर वृक्ष या...फूल फल पत्र बनता है।
जल आदि तो निमित्त मात्र है...तथाहि द्रव्य क्षेत्र काल है।।
तथाहि भोक्ता मेरा मैं हूँ...शुभ-अशुभ या शुद्ध का।
दुःख या सांसारिक सुख...अथवा आत्मिक सुख का।। (1)
मैं हूँ मेरा मैं हूँ कर्म...शुभाशुभ शुद्ध रूपमय।
व्यवहार है बाह्य कर्म...शरीर वचन या जड़मय।।
तथाहि करण सम्प्रदान...अपादान अथवा क्रिया भी।
निश्चय से मेरा रूप है...शुभ-अशुभ या शुद्ध भी।। (2)
मेरे बिना सब बाह्य कारक...मेरे न होते कदापि।
भले होते अन्य के कारक...जीव-अजीव अन्य द्रव्य के।।

विश्व में यदि मैं न होता...मेरे लिये विश्व शून्य है।
मेरे सम्बन्धी सर्वकारक...विश्व में होते शून्य हैं।। (3)
अतएव ही मेरे लिये मैं...श्रेष्ठ ज्येष्ठ व सर्व हूँ।
मुझको मैं ही मुझमें पाऊँ...यह ही आत्मिक धर्म है।।
इसी के लिये ही ज्ञान-ध्यान...व्रत व समिति भी पालूँ हूँ।
प्रवचन या लेखन-पाठन...आहार-विहार भी करता हूँ।। (4)
केवली तीर्थंकर गणधर...यह ही परम धर्म किया।
इसी धर्म हेतु 'कनकनन्दी'...बाह्य प्रपंच भी त्याग किया।। (5)

(खुणादरी अतिशय क्षेत्र रात्रि विश्राम में) 21.12.2012, रात्रि 10:31

''मेरा स्व-शुद्धात्मा के अनन्त वैभव का स्मरण''

(राग : चौपाई (मैं हूँ तम्बाखू.....).....नरेन्द्र छन्द.....आत्मशक्ति से.....)
दोहा- मैं मेरा शुद्ध स्वरूप का...कर रहा हूँ स्मरण।
सर्वज्ञ द्वारा ज्ञात है...आचार्यों ने किया वर्णन।।
मैं हूँ आत्मा सबसे महान्...सबसे महान् मेरे गुण।
द्रव्य में हूँ श्रेष्ठ द्रव्य...तथाहि तत्त्व पदार्थ महान्।।
मुझमें गुण (गण) अनन्त होते...तथाहि पर्याय होती अनन्त।
अतः सर्वज्ञ ही मुझे जानते...विज्ञानी भी न जानते मेरा रूप।।
सर्वगुण भी अभी मुझे है न ज्ञात...स्मरण करूँ जो सूरी प्रणीत।
स्व-स्मरण रूपी स्व-आत्म ध्यान...करने हेतु मैं यहाँ किया वर्णन।।
चैतन्यभाव धारण करने योग्य...''जीवत्व'' शक्ति से मैं संयुक्त।
जड़रहित मेरा होना स्वभाव...''चिति'' शक्ति से हूँ मैं संयुक्त।।
अनाकार उपयोगमय मेरा रूप...''दर्शन'' शक्ति से मैं हूँ मण्डित।
साकार उपयोगमय मेरा रूप...''ज्ञान'' शक्ति से मैं हूँ पण्डित।।
अनाकुलतामय है ''सुख'' शक्ति...स्व-स्वरूप रचने की ''वीर्य'' शक्ति।
अखण्डित प्रतापशाली ''प्रभुत्व'' शक्ति...सर्वभावों में व्यापक ''विभुत्व'' शक्ति।।
लोकालोक के ''अवलोकन'' शक्ति...सत्तामात्र दर्श ''सर्वदर्शी'' शक्ति।
विश्व-प्रतिविश्व ''ज्ञायक'' शक्ति...अविशेष जानना ''सर्वज्ञ'' शक्ति।।

विश्व प्रतिबिम्बित ''स्वच्छत्व'' शक्ति...स्वयं प्रकाशमान ''प्रकाश'' शक्ति।
क्षेत्रकालादि ''असंकुचितविकास'' शक्ति...अव्याबाध अमोघ परम शक्ति।।
''अकार्य-कारणत्व'' विशेष शक्ति...स्वयम्भू अन्य अकारक स्वतंत्र शक्ति।
''परिणम्य-परिणामकत्व'' जो शक्ति...ज्ञेय-ज्ञानाकार ग्रहण शक्ति।।
''त्याग-उपादान शून्यत्व'' शक्ति...हिनाधिकरहित स्वरूप/(नियत) शक्ति।
षट्स्थान पतित हानि-वृद्धि परिणति...''अगुरुलघुत्व'' यह विशेष शक्ति।।
''उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यत्व'' की शक्ति...क्रमवर्ती पर्याय व गुणों की शक्ति।
इससे युक्त है ''परिणाम'' शक्ति...कर्मबन्ध रहित ''अमूर्तत्व'' शक्ति।।
''अकर्तृत्व'' शक्ति से मैं हूँ सम्पन्न...अन्य का नहीं हूँ मैं कर्त्ता निदान।
''अभोक्तृत्व'' शक्ति से मैं हूँ पूर्ण...स्व का भोक्ता हूँ न अन्य सम्पूर्ण।।
''निष्क्रियत्व'' शक्ति से मैं हूँ युक्त...कर्मरहित से निश्चल युक्त।
असंख्यात ही हैं मेरे आत्मप्रदेश...अतएव मेरे हैं नियतप्रदेश।।
सर्व शरीरों में है एक स्वरूप...''स्वधर्मव्यापकत्व'' यह स्वरूप।
''अनन्तधर्मत्व'' है मेरी शक्ति...विलक्षण स्वभावों की मैं (हूँ) समिष्ठी।।
''विरुद्धधर्मत्व'' है मेरी शक्ति...तद्-अतद्रूपों की मैं (हूँ) समिष्ठी।
मैं हूँ ''तत्त्व'' मैं हूँ ''अतत्त्व''...मैं हूँ ''एकत्व'' तथा ''अनेकत्व''।।
मैं हूँ ''भाव'' तथा ''अभाव''...''भावाभाव'' व ''अभाव भाव''।
मैं हूँ ''क्रिया'' मैं हूँ ''कर्म''...मैं हूँ ''कर्तृ'' मैं हूँ ''करण''।।
''सम्प्रदान'' व ''अपादान'' मैं हूँ...''अधिकरण'' व ''सम्बन्ध'' मैं हूँ।
''अस्तित्व'' ''वस्तुत्व'' ''प्रमेयत्व'' मैं हूँ...''ज्ञाता'' ''ज्ञेय'' ''उपादेय'' मैं हूँ।।
''सच्चदानन्द'' ''ब्रह्मरूप'' हूँ...''ज्ञानानन्द'' सिद्ध स्वरूप हूँ।
देव मानव व नारकी तिर्यंच...कर्मजनित न शुद्ध स्वरूप।।
नीलावर्ण नहीं आकाशरूप...कर्मजनित नहीं मम स्वरूप।
राजा-महाराजा व चक्री वैभव...कर्मजनित है जड़ स्वभाव।।
मेरा वैभव है चैतन्य भाव...अनन्त अविनाशी आत्म-वैभव।
इसी हेतु चक्री बनते मुनि...आत्म-वैभव हेतु बनते ध्यानी।।
मैं भी इसका ही करता ध्यान...आत्म-वैभव इच्छुक 'कनक' मुनि।

छाणी 27.12.2012, रात्रि 10:00

(इस विषय संबंधी विशेष वर्णन कवि की कृति ''अनन्त शक्ति सम्पन्न परमाणु से परमात्मा तक'' में है।)
(''समयसार'' की आचार्य अमृतचन्द सूरी कृत टीका पर आधारित यह आत्मस्मरणमय कविता।)

"मेरी परोपकार की प्रवृत्ति क्यों कार्यकारी नहीं हो पा रही है?"

(मेरी भावना, शक्ति, योग्यता का सदुपयोग भारतीय लोग क्यों नहीं कर पा रहे हैं इस संबंधित मेरी पीड़ा)

(राग : शायद मेरी....., आत्म शक्ति....., शत्-शत् वन्दन.....)

परोपकार करने के मेरें, भाव तीव्र होते हैं।
भारत को विश्वगुरु बनाने के, भाव सदा होते हैं।।
धर्म प्रभावना के भाव तो, मेरे विशेष होते हैं।
यह सब नहीं होने के कारण, भी अनेक होते हैं।। (1)

आत्महित सहित परहित, भी करणीय होता है।
परहित पहले आत्महित करना, ही श्रेष्ठ होता है।।
मोक्ष प्राप्ति के लक्ष्य तदनुकूल, ध्यान अध्ययन व समता।
तदनुकूल तन-मन स्वास्थ्य, (व) आहार निवास व्यवस्था।। (2)

इसके साथ परोपकार आदि, करने की मेरी शुभ भावना।
बाल्यकाल से ही उत्तरोत्तर, बढ़ रही है तीव्र भावना।।
तदनुकूल भी मेरे ज्ञान व, अनुभव आदि बढ़ रहे हैं।
तथापि ज्ञानदान परोपकार आदि, मुझसे घट भी रहे हैं।। (3)

भारत में अधिक से अधिक, पाप भी बढ़ रहे हैं।
अन्याय अत्याचार भ्रष्टाचार, मिलावट/(शोषण) हो रहे हैं।।
फैशन व व्यसन बलात्कार, हत्या भी बढ़ रहे हैं।
प्रमाद आलस्य दंभ दिखावा, आदि बढ़ रहे हैं।। (4)

इन सबसे मुझे बहुत चिन्तन, और पीड़ा हो रही है।
निवारण हेतु भावना की, तीव्रता हो रही है।।
कारण व निवारण के उपाय, मुझे सूझ रहे हैं।
सुनना समझना निवारण हेतु, कोई तैयार नहीं है।। (5)

संकीर्ण स्वार्थ भौतिकता में ही, सब व्यस्त मस्त हैं।
सत्ता सम्पत्ति प्रसिद्धि हेतु, सब दत्त चित्त हैं।।
संकीर्ण धर्म जाति भाषा, क्षेत्र में सभी जन-रत हैं।
अर्थ काम हेतु पढ़ाई से, व्यापार आदि में सभी रत हैं।। (6)

उदार व्यापक परोपकार की, भावना घट रही है।

स्वयं को ही श्रेष्ठ-ज्येष्ठ, दिखाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है।।
नैतिकता व आध्यात्मिक-हीन, पढ़ाई रट/(पढ़) रहे हैं।
ऐसी पढ़ाई से ही सभी, सब विकास मान रहे हैं।। (7)
स्व-सुधार बिना विकास उपाय, सरकार में ढूँढ रहे हैं।
कानून प्रशासन पुलिस के द्वारा, समाधान चाह रहे हैं।।
व्यक्ति से समाज समाज से राष्ट्र, के निर्माण काम होते हैं।
आदर्श व्यक्ति से आदर्श होते, अन्यथा अनादर्श होते हैं।। (8)
भारत में आज आदर्श व्यक्तित्व, निर्माण नहीं होते हैं।
आदर्श व्यक्तित्व के बिना, सभी विकास चाह रहे हैं।।
प्रकाश के बिना अन्धकार नहीं, जाता है पत्थर या फूलों से।
पवित्र भाव (व) व्यवहार बिना, समाधान नहीं अन्य उपायों से।। (9)
धर्म न्याय (या) शासन प्रशासन, पुलिस पढ़ाई समाज से।
पवित्र भाव-व्यवहार बिना, नहीं होगा समाधान पूर्ण से।।
पवित्र भाव-व्यवहार का किसी भी, क्षेत्र में नहीं सही/(विशेष) महत्त्व।
सत्ता सम्पत्ति प्रसिद्धि पढ़ाई, फैशन-व्यसन रूढ़ि महत्त्व।। (10)
दूसरों के घर जलने पर, सोचते हैं अच्छा प्रकाश हुआ।
स्वयं के घर जब जलते, तब मानते हैं विनाश हुआ।।
पवित्र भाव व्यवहार की शिक्षा, नहीं लेते हैं कहीं से।
ऐसी शिक्षा जिससे मिलती, दूर रहते हैं उन्हीं से।। (11)
टी.वी. देखेंगे गप्पे लड़ायेंगे, आवारागर्दी भी खूब करेंगे।
प्रवचन सुनेंगे भी मनोरंजन के, आडम्बरमय धर्म करेंगे।।
आदर्श साहित्य नहीं पढ़ेंगे, उत्तम चर्चा भी नहीं करेंगे।
उदार आध्यात्मिक प्रवचन को, व्यर्थ मानकर नहीं सुनेंगे।। (12)
स्वार्थ या व्यर्थ काम के लिये, समय शक्ति लगाते सब।
पवित्र भाव व्यवहार हेतु, समय शक्ति न बचाते सब।।
प्रायः लोग कालाधन कमाकर, दिखावा में करते हैं थोड़ा दान।
इसीसे वे पाप छिपाकर, समाज में कमाते हैं बड़ा नाम।। (13)
ऐसे लोगों को देते हैं सम्मान, समाज सरकार साधुजन।
जिससे कालाधन कमाने का, समर्थन करते वे सब जन।।
साक्षरी सम्पत्ति धर्माडम्बरी, तों देश में बढ़ रहे है।

किन्तु नैतिक सदाचारी ज्ञानी, अधिक घट रहे हैं।। (14)

आधुनिकता के नशे में आज, भारत मद-मस्त हो रहा है।
सादा जीवन व उच्च विचार को, गंवारू पिछड़ा मान रहा है।।
इन सब कारणों से भारत में, आज अपराधों की बाढ़ आ रही।
पढ़ाई सत्ता सम्पत्ति कानून, रूढ़ि धर्म को बहा ले रही।। (15)

ऐसी परिस्थिति में कहाँ किसी के, पास होगा विवेक।
जो सुनेगा समझेगा मुझे, पार होने हेतु बढ़ाये विवेक।।
जब भारत की महान् संस्कृति को, नहीं अपनाते सभ्य/(बोल्ड) इण्डियन।।
भारतीय संस्कृति का मैं अनुयायी, मुझे क्यों मानेंगे आधुनिक/(इण्डियन इडियट) मैन।।(16)

इसी हेतु मैं तटस्थ होकर, सबकी करूँ मंगल-कामना।
स्व-पर-राष्ट्र-विश्वहित हेतु, सबमें जगे शुभ-भावना।।
चारों कषाय व पंच पाप, तथा सप्त व्यसन त्याग।
सभी अपराध निर्मूलन के, सही उपाय समग्र।। (17)

इसे जाने माने तथा, सभी स्वीकार प्रयोग करें।
शिक्षा कानून धर्म समाज में, सब जन ग्रहण करें।।
मैं दृढ़ प्रतीज्ञा सहित भाता हूँ, मेरी भावना सदा पावन हो।
स्व-पर-राष्ट्र-विश्वहित हेतु, 'कनक' की भावना जागृत हो।। (18)

छाणी प्रारम्भ 1.1.2013 से 2.1.2013 तक, रात्रि 1:08
(2013 की प्रथम कविता)

''मेरी गुण-दोष समीक्षा से लाभान्वित होते हैं कम''
(राग : रघुपति राघव राजाराम...)

''मेरी गुण-दोष समीक्षा से लाभान्वित होते हैं कम''

(राग : रघुपति राघव राजाराम.....)

मेरी प्रवृत्ति अन्य से भिन्न होती है, ईर्ष्या द्वेष घृणा से रिक्त होती है।
स्व-पर हितकारी वृत्ति होती है, समता सत्यग्राही कृति होती है।।
स्व-पर दोषों से मैं शिक्षा लेता हूँ, स्व-पर हित हेतु शिक्षा लेता हूँ।
योग्य व्यक्ति हेतु शिक्षा देता हूँ, अहितकर भाव नहीं लाता हूँ।। (1)

स्व-दोषों को मैं दूर करता, स्व-गुणों को मैं बढ़ाता जाता।

स्वयं की रक्षा हेतु यत्न करता, स्व-पर-गुण-दोष (को) अतः जानता।
छिद्रान्वेषण में नहीं करता, अन्य का अहित मैं नहीं करता।
सुयोग्य वैद्य सम मेरी प्रवृति, पापभीरू गुरु सम मेरी प्रकृति।। (2)
अन्य प्रायः मुझसे भिन्न ही होते, जौंक सर्प मच्छर समान होते।
(अतः) अन्य मुझे अन्य सम मानते, उसी दृष्टि से व्यवहार करते।।
अतः मुझसे कम लाभ ले पाते, संकट रोग क्लेशों को सहते।
ठोकर खाकर ही कोई मानते, ठोकर से भी कुछ नहीं मानते।। (3)
इनसे भी (मैं) माध्यस्थ भाव रखता, सभी सुखी बने कामना करता।
सुधरने पर उन्हें मार्ग बताता, सुमार्ग गमन से सुखी बनता।।
सभी को मैं उपदेश नहीं झाड़ता, सुयोग्य शिष्यों को अनुभव बताता।
अनुभव समझना अति कठिन, अनुभव करना और भी कठिन।। (4)
अनुभव की उपलब्धि विरल होती, क्षयोपशमलब्धि दुर्लभ होती।
सामान्य जानकारियाँ प्रायः रखते, अतएव अनुभव न पचा पाते।।
बोधि दुर्लभ है अति दुर्लभ, अनुभवी गुरु के लाभ दुर्लभ।
इनके सदुपयोगी शिष्य दुर्लभ, 'कनकनन्दी' चाहे ऐसा ही लाभ।। (5)

छाणी 7.1.2013, मध्याह्न 1:25

"स्वयं को स्वयं पुरस्कृत करें"

(स्वयं को स्वयं पुरस्कृत करना सहज एवं सस्ता)

(राग : बहुत प्यार करते है....., गजानना श्री गणराया.....)
स्वयं को पुरस्कृत स्वयं कीजिये...अच्छे भाव व्यवहार सुख दीजिये।
तनाव व रोग से दूर रखिये..ध्यान-अध्ययन व ज्ञान दीजिये।।
उदार सहिष्णु भाव दीजिये...मैत्री प्रमोद सह कीजिये।
करूणा समता धैर्य दीजिये...दूसरों के पहले स्वयं दीजिये।।
प्राकृतिक सौन्दर्य का लाभ दीजिये...पक्षियों के निःशुल्क गाना सुनिये।
झरना नदियों के लय सुनिये...समुद्र बादलों के तान सुनिये।।
भोले-भाले बच्चों से शिक्षा लीजिये...उदार जिज्ञासु सीधा बनिये।
क्षमा नम्रशील गुणग्राही बनिये...भेदभाव-रहित सच्चा बनिये।।

स्व-पर गलती से शिक्षा लीजिये...विकास का पाठ अथ लीजिये।
स्व-अच्छे कार्यों को याद कीजिये...प्रेरणा ले और प्रसन्न होइये।।
नकली न बनकर सच्चा बनिये...सच्चाई व अच्छाई की खुशी लीजिये।
सच्ची-अच्छी कल्पना सदा कीजिये...कुचिन्ता से बचकर सफल होइये।।
दिल व दिमाग को खुला रखिये...ज्ञान सुख मैत्री सच्ची पाइये।
परोपकार के भाव-काम कीजिये...पुण्य प्रसिद्धि व सहयोग पाइये।।
बिना धन से स्वतः पाइये...अन्य से प्राप्ति की इच्छा त्यजिये।
तृप्ति शान्ति अनुभूति स्वतः की होती...'कनकनन्दी' को स्वतः मिलती।।

बावलवाड़ा 5.12.2012, मध्याह्न 2:45

स्वयं के द्वारा स्वयं को महान् बनाओ

(राग : 1. रघुपति राघव....., 2. हे राम! हे राम!.....)
अन्य को क्या/(क्यों) प्रभावित करना रे!/(हे!) वन्दे,
स्वयं को प्रभावित किया करे!। हे मम/(हे प्रबुद्ध) आत्मन्!
अन्य को प्रकाशित करने के पहले, स्वयं को प्रकाशित किया करो।।
दूसरों को उपदेश देने के पहले, स्वयं को उपदेश दिया करो।
डूबते हुए को पार लगाने हेतु, स्वयं तो तैरना सीखा करो।।
जो सूर्य स्वयं प्रकाशित होता/(है), अन्य भी प्रकाशित होते स्वयं ही।
जो फूल स्वयं सुगन्धित होता/(है), पवन सुगन्धित होते स्वयं ही।।
तानाशाही स्वयं को न शासित करता, अन्य पर शासन करता वह भी।
तीर्थंकर स्व-पर शासन करते, विश्व शासित होता स्वयं ही।।
श्याम विवर/(ब्लेक हॉल) न प्रकाशित करता, दूसरों को निगलता विशेष वही।
जो स्वयं आदर्श नहीं होता है, दूसरों को कष्ट देता भी वही।।
स्वयं ही श्रेष्ठ चुम्बक बन जाओ, गुणग्राही आकर्षित होंगे स्वयं ही।
मकरन्द भरा कुसुम कानन से, मधुप आकर्षित होते स्वयं ही।।
मकरन्द भरा कुसुम कानन से, मधुप आकर्षित होते स्वयं ही।।
गुणों को स्वयं में विकसित करो, गुणी बन जाओगे स्वतः ही स्वयं ही।
स्वयं में ही जब संतुष्ट रहोगे, संतोष सुख पाओगे स्वयं ही।।
स्वयं की उपलब्धि स्वात्मोपलब्धि, जिसकी उपलब्धि स्वतः तू ही।

मृग नाभि में कस्तूरी विराजे, बाहर ढूँढने से मिलेगी नहीं।।
यह है परम आध्यात्म रहस्य, आध्यात्म ध्यानी जानते सही।
स्वयं के द्वारा ही स्वयं को पाओ, 'कनकनन्दी' की साधना यही।।

खेरवाड़ा 24.1.2013, रात्रि 4:05

समता/शान्ति में बाधक तत्त्व

(तर्ज : पारस तेरी कठिन डगरियाँ, नगरी-नगरी द्वारे-द्वारे.....)
समता है तेरी कठिन डगरियाँ, किस विधि पाऊँऽऽ तेरी उपलब्धियाँ।
राग द्वेष मोह भारी विपत्तियाँ, तेरी प्राप्ति में लाती आपत्तियाँ।।ध्रुव।।
ख्याति पूजा लाभ करते प्रलोभित, ईर्ष्या तृष्णा (घृणा) अग्नि प्रज्ज्वलित।
मद व सप्त भय करते भयभीत, शंका चंचलता करती विचलित।।
आकर्षण-विकर्षण देते अस्थिरता, आर्तरौद्र ध्यान लाती है विषमता।
हरा ना पाता/(दूर न कर पाता) हूँ कर्म (की) प्रबलता, अयोग्य/(विपरीत)
द्रव्यक्षेत्र काल विपरीतता।।
तेरी प्राप्ति हेतु मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा, टिक न पायेगी कोई भी आपत्तियाँ।
तेरी प्राप्ति मुझे अवश्य ही होगी, तेरी प्राप्ति से आत्मशान्ति भी मिलेगी।।
इसका ज्ञान-भान मुझे हो रहा है, अनुभव तेरा मुझे हो रहा है।
पूर्ण प्राप्ति हेतु 'कनक' रत है, तेरी उपलब्धि मेरा तो लक्ष्य है।।

छाणी 30.12.2012, मध्याह्न 2:05

मानव का सच्चा स्वरूप

(राग : आत्मशक्ति से.....)
वह मानव ही है सच्चा मानव, जो मननीय/(माननीय) गुणों से युक्त होता।
केवल मानव शरीर मात्र से, जड़रूप में भले मानव होता।।
मनु की सन्तान मानव है जो, मन से उत्कृष्ट मानव/(प्राणी) होता।
मनन चिन्तन शोध-बोध से, महान् गुणों को प्राप्त करता।।
जो सनम्र सत्याग्राही होता है, किन्तु नकलची दुराग्रही नहीं होता।
जो दृढ़संकल्पी तो होता है, नहीं दम्भी मिथ्याग्राही होता।।

जो स्वाभिमानी सोऽहं भावी होता है, नहीं अभिमानी संकीर्ण होता।
जो वीर साहसी होता है, नहीं क्रूर अत्याचारी होता।।
जो शान्त गम्भीर होता है, नहीं आलसी उदासीन होता।
जो आत्मिक सन्तोषी होता है, नहीं महान् लक्ष्य से रिक्तता।।
जो अहिंसा परायण होता है, नहीं कायर निष्क्रिय होता।
जो सरल-सहज होता है, नहीं अबोध दब्बू होता।।
जो वैराग्य सम्पन्न होता है, नहीं अलगाववादी होता।
जो आकिञ्चन्य धर्म पालता है, नहीं दीन-हीन-गरीब होता।।
जो निन्दा प्रशंसा से सीखता है, नहीं दीन-अहंकारी होता।
जो प्रामाणिक गुणी होने पर भी, निन्दा से अविचल रहता।।
जो उपेक्षा-अपेक्षा रहित है, जो प्रतीक्षा रहित बढ़ता।
शुत्र-मित्र या हानि-लाभ से, अविचल अविराम चलता।।
सत्यनिष्ठ व गुणी होकर भी, जो एकला ही आगे बढ़ता।
जो सरल-सहज नम्र होकर भी, सत्य में अडिग रहता।।
आत्मोपलब्धियों का सदुपयोग से भी उनका विकास करता।
अक्षम्य-दोष को भी क्षमा जो करके किसे भी कष्ट न देता।।
जो आत्मा को परमात्मा बनाने हेतु सत् पुरुषार्थ करता है।
मानव से महामानव बनकर अन्त में भगवान् बनता है।।
वह ही सच्चा मानव है नहीं/(तो) मानवाकार दानव है।
मानव भगवान् बने इसी हेतु 'कनक' करे आह्वान है।।

खेरवाड़ा 24.1.2013, रात्रि 3:12

(यह कविता 'रूडियार किप्लिंग' एवं 'शिव खेड़ा' के विचारों से भी प्रभावित है।)

असाधारण पुरुषों की क्यों होती है अलौकिक वृत्ति?

(राग : आत्मशक्ति.....नरेन्द्र छन्द)

दार्शनिक वैज्ञानिक लेखक सन्त साधक होते हैं अति विचित्र/(विशेष)।
साधारण लोगों से होते हैं विपरीत तथा पालते हैं उच्च चारित्र।।
असाधारण प्रतिभा न होती सामान्य में, तथा न होता है महान् लक्ष्य।
गतानुगतिक नकलची होते सत्ता सम्पत्ति ही होता है लक्ष्य।।

इसी से भिन्न वे महान् होते, दार्शनिक आदि विचित्र/(विशेष) लोग।
सत्य-तथ्य के शोध-बोध हेतु, करते वे सदा भिन्न प्रयोग।।
इसी हेतु वे सदा प्रयत्न करते, तन-मन समय व साधन से।
तुच्छ कार्य हेतु उनके पास, नहीं रहता तन-मन साधन व समय।।
जिससे वे फैशन-व्यसन व आडम्बर दिखावा नहीं करते।
लड़ाई-झगड़ा व गप्पे लगाना, आलस्य प्रमाद भी नहीं करते।।
स्व-स्व लक्ष्य प्राप्ति हेतु वे, भोग-विलासिता से दूर रहते।
धन-जन-मान प्रतिष्ठा लाभ को, तुच्छ मानकर दूर रहते।।
इसलिए इनके रहन-सहन व वेशभूषा भी भिन्न होते।
कम वस्त्र रखते या कौपीन धरते उच्च सन्त तो नग्न रहते।।
कोई बाल बढ़ाते या मुण्डन करते जैन साधु केशलोंच करते।
शाकाहार करते कम बार खाते जैन साधु एक बार आहार लेते।।
एकान्त शान्त स्थान में रहते, मौन अध्ययन चिन्तन करते।
असामाजिक सा वर्तन करते, संकीर्ण रूढ़ि से परे वे होते।।
अतएव अन्य इन्हें भ्रष्ट मानते, बुद्धिहीन व पागल मानते।
इनकी निन्दा चुगली करते, अपमान करते कष्ट भी देते।।
इसके दृष्टान्त अनेक प्रसिद्ध, तीर्थंकर बुद्ध ईसा मसीह।
सुकरात गैलीलियो मीराबाई अनेक साधु सन्त लेखक चिन्तक।।
इतिहास पुराण में यह सब पढ़ा हूँ, देश-विदेशों के ग्रन्थ में पढ़ा हूँ।
जीवन में बहु अनुभव किया हूँ 'कनक' इसी से मैं पाठ पढ़ा हूँ।।

खेरवाड़ा 2.2.2013, रात्रि 12:28

(यह कविता वैज्ञानिक आइंस्टाइन की जीवनी से भी प्रभावित है।)

''मानसिक जटिलतायें''

(दिखावे की प्रवृत्ति है मेंटल कॉम्प्लेक्स)

(राग : चौपाई.....)

दिखावे के मनोविज्ञान को जानो, मानसिक जटिलता को पहचानो।
मानसिक कॉम्प्लेक्स को पहचानो, इसे दूर कर सज्जन/(महान्) बनो।।

दूसरे कारण है दीन-अहंभाव, मान कषाय व ईर्ष्या के भाव।
संकीर्ण मनोभाव व अन्धानुकरण, विखण्डित व्यक्तित्व लक्ष्य संकीर्ण।।
इसके प्रमुख लक्षणों को जानो, असम्यक् चुनाव को प्रधान मानो।
दुःख-सुख के बीच चुनाव प्रसंगे, दुःख को चुने सुख को त्यागे।।
यथा चुनाव में दुष्ट को चुनना, फैशन-व्यसन-कुखाद्य चुनना।
समय शक्ति का अपव्यय करना, सत्ता-सम्पत्ति का तथाहि करना।।
स्व-पर प्रति सख्ती बरतना, मनमानीपना उद्दण्ड होना।
मनमर्जी से अन्य को चलाना, डाँट-फटकार से काम कराना।।
जो न माने उसे शत्रु मानना, शत्रु के मित्र को शत्रु मानना।
पक्ष-विपक्ष का ही भेद करना, निष्पक्ष भाव को नहीं मानना।।
तिल को ही ताल समान करना, बढ़ाचढ़ाकर डींग हाँकना।
बिन जाने-माने तनातनी करना, गपोडशंख समान बकना।।
सुपरमैन का कॉम्प्लेक्स होना, कर्त्ता-धर्त्ता का अहंकार होना।
दंभपूर्ण आत्मविश्वास होना, हर काम में समर्थ जताना।।
परोपदेशी पाण्डित्य बनना, तथ्य विहीन कुतर्क करना।
शकुनी सम राय परोसना, कण छोड़कर तुस को कूटना।।
समाधान बिन समस्या बढ़ाना, बिना सिर-पैर बातें करना।
बिन काम के गाल बजाना, मनमानी से तर्क गढ़ना।।
बेमतलब काम को करना, ताँक-झाँककर काम बिगाड़ना।
बन्दर समान आम उगाना, स्वयं को दक्ष उद्यमी जताना।।
क्लियोपेट्रा सम नाक कटवाना, अश्लील अयोग्य काम करना।।
सज-धजकर मेला में जाना, वैभव सुन्दरता को दिखाना।
एकान्त में अच्छा काम न करना, भीड़-भाड़ में दिखावा करना।।
हर काम में नुक्ताचीनी करना, छिन्द्रान्वेषी निन्दक बनना।
हर काम में गड़बड़ी देखना, षडयंत्रणा की शंका करना।।
सहज-सरलता इनसे नशती, मृदु-मधुरता नहीं रहती।
समरसता व शान्ति न मिलती, गम्भीरता की छवि न रहती।।
उच्च आदर्श व सदाचरण से, दया सेवा व परोपकार से।
सम्मान गौरव मिले सभी से, 'कनक' महान् बनो भाव से।।

खेरवाड़ा 26.1.2013, रात्रि 10:57

(यह कविता साइकोलॉजी (कमलेश सिंह) से भी प्रभावित)

निन्दा-प्रशंसा के स्वरूप एवं फल

(राग : रघुपति राघव.....शायद मेरी (नरेन्द्र).....जय हनुमान.....)

निन्दा व प्रशंसा के स्वरूप को जानो, दोनों से उत्पन्न फल पहचानो।
निन्दा है गुण-द्वेष असूया भाव सह, गुण व गुणी प्रति अनादर सह।।
प्रशंसा इसी से है विपरीत भाव, गुण व गुणी प्रति आदर भाव।
निन्दक में अनेक दुर्गुण भी होते, ईर्ष्या द्वेष घृणा पक्षपात होते।।

जोंक मच्छर सर्प गृहमक्खी सम, गुणी में भी करता दुर्गुण आरोपण।
इसी से बहुविध पाप ही कमाता, नीच गोत्र व असाता को बान्धता।।
निन्दक पृष्ट माँस भक्षी सम होता, कीर्ति हनन रूपी हिंसा को करता।
निन्दा रसपान में मदमस्त होता, गुणी सज्जनों से बहिष्कृत होता।।

कलह झगड़ा व विद्वेष फैलाता, प्रेम संगठन शान्ति को तोड़ता।
परभव में नीच गोत्र में जन्मता, तिर्यञ्च नारकी म्लेच्छ में जन्मता।।
निन्दा अपमान रोगों को भोगता, परिवार समाज से तिरस्कृत होता।
इसी से विपरीत प्रशंसक होता, गुण-गुणी प्रति प्रमुदित होता।।

मधुमक्खी हंस गाय सम होता, सुगुण रस को ग्रहण करता।
इसी से प्रशंसक प्रसन्न होता, स्व-पर के गुणों का विकास करता।।
प्रेम संगठन शान्ति को बढ़ाता, कलह झगड़ा विद्वेष घटाता।
उच्च गोत्र व साता वेदनीय बाँधता, देव मानव भोगभूमि में जन्मता।।

सम्मान कीर्ति सुख को भोगता, परिवार समाज में पुरस्कृत होता।
चापलूसी नहीं है यथार्थ प्रशंसा, दोष परिमार्जन नहीं यथार्थ निन्दा।।
वेश्या व ठग के वचन न प्रशंसा, प्रायश्चित्त आलोचना गर्हा न निन्दा।
प्रशस्त वचन से होती प्रशंसा, अप्रशस्त वचन सै होती है निन्दा।।

प्रार्थना स्तुति पूजादि प्रशंसा, गाली अपशब्द झूठ वचन निन्दा।
वचन से व्यक्तित्व पहचान होता, प्रशंसा से उच्च निन्दा से नीचा।।
उच्च विचार उच्च कथन करणीय, 'कनकनन्दी' द्वारा उच्च ही वरणीय।
निन्दा प्रशंसा से परे है आध्यात्मिक, शुभ करणीय अशुभ त्यजनीय।।

छाणी 14.1.2013 (मकर संक्रान्ति), रात्रि 2:53

वचन असंयम के कारण

(राग : इतनी शक्ति...., छोटी-छोटी गैया.....)

मौनात् मुनि होते परम ज्ञानी, मौन साधना से बनते केवलज्ञानी।
मौन साधना यदि सम्भव नहीं, हित मित प्रिय कथन सही।।
इसी हेतु सत्यधर्म पालते, भाषा समिति व गुप्ति पालते।
अणुव्रत महाव्रत सत्य पालते, अल्प मधुर व हित बोलते।।
इन्हीं गुणों से जो रहित होते, संयम धैर्य को नहीं धरते।
वाचाल निन्दक प्रमादी होते, असत्य कठोर अति बोलते।।
सत्य-तथ्य ज्ञान से रहित होते, भावात्मक अनेकान्त नहीं पालते।
स्याद्वाद कथन को नहीं करते, संतुलित वचन नहीं बोलते।।
क्रोध मान माया से सहित होते, घृणा तृष्णा से सहित होते।
मर्यादा शालीनता नहीं पालते, सम्यक् वचन वे नहीं बोलते।।
तनाव डिप्रेशन युक्त होते, भय व विद्वेष भाव रखते।
हिताहित विवेक नहीं रखते, असत्य अनर्गल बातें करते।।
सोच विचार कर नहीं बोलते, कार्यकारण सम्बन्ध नहीं जोड़ते।
विषय परिज्ञान नहीं करते, यथार्थ वचन से रहित होते।।
छिन्द्रान्वेषी निन्दक भाव रखते, दूसरों का सम्मान नहीं करते।
परिणाम सम्बन्धी नहीं सोचते, प्रकृष्ट वचन वे नहीं बोलते।।
कर्म सिद्धान्त को जो नहीं मानते, मनोविज्ञान को नहीं जानते।
दण्ड विधान से अज्ञ रहते, सच्चा अच्छा वचन नहीं बोलते।।
ध्यान अध्ययन नहीं करते, अभ्यास अनुप्रेक्षा नहीं करते।
सरल सहज मृदु न होते, कठोर अविनयी दुष्ट होते।।
महान् लक्ष्य व उच्च विचार हीन, समय शक्ति का सदुपयोग विहीन।
किंकर्त्तव्य विहीन सहित जन, वचन संयम में न होते प्रवीण।।
उपरोक्त कारणों से सहित जन, एकाधिक कारणों से सहित जन।
असम्यक् कथन वे ही करते, कारण के बिना कार्य नहीं होते।।
गम्भीर धैर्यवान् संयमी बनो, अनुशासन प्रियशालीन बनो।
मौन रहो या सत्य ही कहो, 'कनक' के हितकारी वचन गहो।।

छाणी 17.1.2013, रात्रि 2:20

(इस कविता के विशेष परिज्ञान हेतु कवि की कृति ''मौन रहो या सत्य कहो'' का अध्ययन करें। इस कविता में संघस्थ साधु-साध्वियों के अनुभव भी समाहित है।)

उठो ! जागो ! लक्ष्य को प्राप्त करो !

(राग : ओ बसन्ती.....गजानना श्री.....आओ बच्चों तुम्हें.....या वार्‌याच्या.....पावन है इस.....आत्मशक्ति से.....तुम दिल की.....इतनी शक्ति हमें.....)

उठो ! जागो ! व प्राप्त करो, अपने लक्ष्य महान् को।
चीर फाड़कर फेंक ही दो, मध्य के बाधा-विघ्नों को।।
लक्ष्य को पाओ रे, स्वयं को जानो रे...
स्व में स्थित विघ्न-बाधा को, पहले ही उन्हें नाश करो।
यथा अन्धेरा के नाश हेतु, पहले दीपक जलाया करो।।

आत्म दुर्गुण के नाश के हेतु, आत्मविश्वास को जगा करो।
क्रोध मान माया लोभ काम को, क्षमादि भाव से नाश को।।
आत्मानुशासन संयम धैर्य से, स्वयं ही शक्तिशाली बनो।
महान् लक्ष्य की प्राप्ति के निमित्त, प्रबल वेग से आगे बढ़ो।।

बाह्य के बहु बाधा-विघ्न को, प्रचण्ड शक्ति से पार करों।
संकीर्ण स्वार्थी दुष्ट जनों से, स्व को प्रभावित मत करो।।
सभी का हित चिन्तन करो, किसी की चिन्ता/(संक्लेश) मत करो।
स्व-पर विश्व के हेतु, भय व मद त्याग करो।।

सत्य समता शान्ति से रहित, होते है अधिकांश लोग।
देखते हुए भी होते हैं अन्धे, अनेक मार्ग से चलो अलग।।
उनके रास्ते से चलकर तुम्हें, महान् लक्ष्य न मिलेगा कभी।
उनके मार्ग में चलने के कारण, समय शक्ति/(बुद्धि) नशेंगे सभी।।

इसी कारण से ही अनन्त भव में, अनन्त दुःखों को सहा है तुम।
उनके मोह ममत्व छोड़कर, निर्ममत्व भाव धारो है तुम।।
संकीर्ण पंथ मत की सीमा, जाति भाषा व राष्ट्र की।
लाँघना होगा और भी सभी, मानवकृत बाधायें भी।।

विश्वासघात कभी न करो, सभी का विश्वास मत करो।
अपेक्षा उपेक्षा प्रतीक्षा रहित, सत्य समता सह आगे बढ़ो।।
सूर्य के समान तेजस्वी बनो, वज्र के समान कठोर भी।
कमल के समान निर्लिप्त बनो, शिरीष कुसुम सम कोमल भी।।

अमोघ बाण समय लक्ष्य को भेद, परमाणु समान बनो अभेद।
परम लक्ष्य हो आत्मोपलब्धि, ''कनक'' उसी में सदा सन्नद्ध।।

छाणी 12.1.2013, रात्रि 10:20

''क्षुद्र मानवकृत सीमा से पार चला''

(राग : दुनियाँ हँसे....., छोटी-छोटी गैया....., रघुपति राघव....., तितली उड़ी-उड़ जा चली.....)

मैं तो चला...उस पार चला...क्षुद्र मानवकृत क्षुद्र सीमा से।
शरीर भले...सीमा में रहे...सीमा को लाँघा भावशक्ति से।।ध्रु.।।

क्षुद्र मानव...क्षुद्र सोचता...क्षुद्र सीमा में ही सभी बान्धता।
काल बान्धता...क्षेत्र बान्धता...भाषा जाति व धर्म/(नीति) बान्धता।।

क्षुद्र सीमा में...स्वयं बन्धता...पशु-पक्षी प्रकृति को तथा बान्धता।
बन्धने वालों को...बन्धु/(सही) मानता...मुक्त महान् को भी क्षुद्र मानता।।

गुट बनाता...संगठन बनाता...संकीर्ण स्वार्थ हेतु दल बनाता।
अर्थ कमाता...भोग/(काम) भोगता...आध्यात्मिक मुक्ति में बाधा बनता/डालता।।

स्वार्थ साधक को...मित्र मानता...इनसे परे सब को शत्रु मानता।
इनके हेतु...संक्लेश करता...द्वन्द्व विद्रोह व युद्ध करता।।

भौतिकता को...स्व मानता...आत्मकल्याण को नहीं करता।
देह अक्ष में...आसक्त होता...इसी हेतु ही हर कार्य करता।।

इन्हीं सीमा (ओं) से...परे मैं हूँ...सच्चिदानन्दमय विश्वरूप हूँ।
श्रद्धा ज्ञान व...उद्देश्य द्वारा...'कनक' चला उस पार चला।।

छाणी 9.1.2012, ब्रह्ममुहूर्त्त 5:57

''जीवन में आध्यात्मिकता की आवश्यकता''

(जीवन में आध्यात्मिकता से लाभ)

(राग : छोटी-छोटी गैया....., नरेन्द्र छन्द....., फूलों का तारों.....)

आध्यात्मिक जीवन को सुखी बनाता, जीते ही जीवन को मुक्त बनाता।
दीन-अहंग्रन्थी से (भी) मुक्त बनाता, अनाकुल सुख का भोक्ता बनाता/(संकीर्ण-स्वार्थ से परे बनाता)।।

संकीर्ण भौतिक दृष्टि हटाता, अपना-पराया भेदभाव छटाता।
व्यापक उदार दृष्टि बनाता, लक्ष्य में परम सत्य बनाता।। (1)

भौतिक हानि-लाभ तुच्छ बनाता, जन्म-मरण को हेय बनाता।
शुत्र-मित्र भेदभाव हटाता, विश्वमैत्री का पाठ पढ़ाता।।

वैषम्यता में भी साम्य बनाता, राग-द्वेष-मोह परे बताता।
संक्लेश-क्लेश से परे बनाता, आकर्षण-विकर्षण दूर करता।। (2)
इन्द्रियातीत भी ज्ञान कराता, मन से परे भी भान कराता।
शुद्ध सोऽहं का मान कराता, मान-अपमान परे कराता।।
सामाजिक कानून से परे उठाता, रीति-रिवाज परे दिखाता।
धार्मिक भेद-भाव हटाता, परम साम्य-भाव जगाता/(जताता)।। (3)
आत्मा को परमात्मा/(जताता) बताता, भौतिक विश्व से परे दिखाता।
सांसारिक बन्धन को क्षीण करता, देह में भी विदेही बनाता।।
अलौकिक अनुभव से युक्त करता, बन्धन युक्त भी मुक्त बनाता।
सुखी जीवन की युक्ति बनाता, 'कनकनन्दी' को मुक्त बनाता।। (4)

छाणी 8.1.2013, प्रातः 6:36

''अधिक सत्ता-सम्पत्ति (प्रसिद्धि) भोग वाले होते हैं अधिक पापी-दुःखी''

(राग : आत्मशक्ति से ओतप्रोतं.....)
सत्ता सम्पत्ति प्रसिद्धि भोग से मिलते हैं अनेक दुःख।
इनके अर्जन संवर्द्धन सुरक्षा व भोग से (में) मिलते हैं दुःख।।ध्रु.।।
जो इनसे संयुक्त होते हैं लगता है वे होंगे सुखी।
मृगमरीचिका या अग्नि-पतंग सम आभास होते वे सुखी।।
इनके अर्जन करने हेतु अन्याय अत्याचार भी करते।
क्रोध-मान-माया-लोभ-मोह से युक्त अनेक पापाचार (भी) करते।। (1)
तथाहि संवर्द्धन सुरक्षा भोग में/(से) उपरोक्त पाप भी होते।
उसके नाश या ह्रास के कारण अनेक संक्लेश भी होते।।
आक्रमण युद्ध विनाश लूट-पाट शोषण मिलावट चोरी।
अन्याय अत्याचार मायाचार कामाचार करते सत्तादि धारी।। (2)
इन कारणों से वे स्वयं दुःखी होते अन्य को भी दुःख देते।
इसी के हेतु स्व-जन पर-जन व स्वयं की भी हत्या करते।।
देश-विदेशों के अभी के व पूर्व के उदाहरण हैं लाखों।

राजा-महाराजा नेता मंत्री धनी इन कुकृत्यों में प्रसिद्ध लाखों।। (3)
सामान्य जनों से भी ये अधिक दुःखी होते किंपाक फल सम रम्य।
दूर से पहाड़ दूर से ढोल दूर से समुद्र सम वे हैं रम्य।।
शारीरिक मानसिक रोगी भी होते, होते है अधिक संक्लेश।
इनके अधिक शत्रु भी होते पाते न कभी संतोष।। (4)
ईर्ष्या तृष्णा घृणा मोह विद्वेष व भयशंका पक्षपात।
फैशन-व्यसन आडम्बर अनिद्रा से होते वे सदा पीड़ित।।
इन कारणों से प्राचीन काल के राजा-महाराजा चक्री/(चक्रवर्ती)।
शान्ति प्राप्ति हेतु सत्तादि त्याग कर बन गये आत्मध्यानी।। (5)
सर्व त्याग जो न कर पाते वे करते थे आंशिक त्याग।
अणुव्रत रूप में स्वीकार करके मर्यादा में करते थे भोग।।
मर्यादाहीन जो सत्तादि भोगते नरक में वे जीव जाते।
'राजेश्वरी सो नरकेश्वरी' बहुआरंभी/(परिग्रही) नरक जाते।। (6)
बहु आरंभ परिग्रह के कारण प्रकृति का भी होता शोषण।
ग्लोबल वार्मिंग असम्यक् वृष्टि, ग्लेशियन गलन व प्रदूषण।।
संतोष सदाचार संयम अनुशासन त्याग दान से है सुख।
आत्मसुख हेतु प्रयत्न करो है 'कनक' चाहे आत्मसुख।। (7)

खेरवाड़ा 21.1.2013, मध्याह्न 1:54

अन्तरंग दूषित भावों की अभिव्यक्ति सत्तादि द्वारा

(समस्त पापाचार एवं दुःखों के कारण अन्तरंग दूषित भाव एवं सत्तादि है)
(प्रमत्त योग से होते हैं समस्त पाप एवं दुःख)
(राग : आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)
क्रोध मान माया लोभ व काम मोह की अभिव्यक्ति।
सत्ता सम्पत्ति कीर्ति भोग व अन्ध श्रद्धा द्वेष से होती।।
यथा बीज की अभिव्यक्ति वृक्ष फलादि से होती है।
तथा क्रोधादि की अभिव्यक्ति सत्तादि द्वारा होती है।।
बीज से वृक्षादि होने के हेतु जलादि कारण होते है।
क्रोधादि की अभिव्यक्ति के हेतु सत्तादि भी कारण होते हैं।।

यथा बीज के अभाव से जलादि से भी वृक्षादि न होते हैं।
तथा क्रोधादि के अभाव से सत्तादि भी हेतु न होते हैं।।
क्रोधादि के सद्भाव से ही हर क्षेत्र हर काम में।
सत्ता सम्पत्ति प्रसिद्धि आदि की कामना होती मन में।।
इसी हेतु शिक्षा व्यापार नौकरी राजनीति सेवा कानून।
शिल्प कला संगीत धर्म का आलम्बन लेते मोही जन।।
अशुद्ध सोना से मूर्ति बने या, अलंकार कुंभ या बर्तन।
अशुद्धमय ही सब होंगे तथा क्रोधादि कृत कर्म।।
सत्तादि से लिप्त रहने वाले निश्चय से होंगे अशुद्धभावी।
भले वे गृहस्थ सामान्य जन विद्वान् राजा साधु या ज्ञानी।।
क्रोधादि के सद्भाव से सत्तादि का होता सद्भाव।
दोनों के जहाँ सद्भाव है पापाचार दुःखों का भी सद्भाव।।
इसी से ही अन्याय अत्याचार भ्रष्टाचार कामाचार युद्ध होते।
मिलावट शोषण फैशन-व्यसन आतंकवाद हत्या चोरी होते।।
दोनों के सद्भाव जहाँ जितने-जितने अंश में जीव में होंगे।
उतने-उतने अंश में वहाँ पापादि का प्रभाव अवश्य होंगे।।
रावण कंस हिटलर आदि से लेकर हर व्यक्ति हर क्षेत्र।
इसी के लिए हैं उदाहरण भूत से लेकर है अभी तक।।
इनसे निवृत्ति हेतु है आध्यात्म लक्ष्य सह ज्ञान व ध्यान।
सरल सहज सन्तोष क्षमा धैर्य समता शील व त्याग दान।।
अतएव तीर्थंकर साधु संत गणधर बुद्ध ऋषि मुनि।
सत्ता सम्पत्ति कीर्ति त्यागकर शान्ति हेतु बनते आत्मध्यानी।।
शुद्धात्मा में/(से) ही अनन्त सुख मिलता जो क्रोधादि से रहित है।
इसी सुख की ही प्राप्ति हेतु, 'कनक' पुरुषार्थ सहित है।।

खेरवाड़ा 20.1.2013, रात्रि 11:25

(यह कविता पुरुषार्थ सिद्धयुपाय, प्रवचनसार आदि ग्रंथों के आधार पर बनी।)

''साधु : सामाजिक-कानूनी सीमा से परे''

(राग : यमुना किनारे श्याम....., दुनियाँ में जीना है.....)

उदार भावनाशील साधु जो होते...स्व-पर-विश्व हेतु काम करते।
किसी भी बन्धन को नहीं मानते...सामाजिक कानूनी जो बन्धन होते।।

राष्ट्रों की सीमा पक्षी नहीं मानते...सूर्य मेघ वायु भी कहाँ मानते।
अलौकिक वृत्ति वाले सन्त जो होते...स्वार्थी मानवों की नीति नहीं मानते।।
विवाह जो सामाजिक मान्य जो होता...अथवा कानूनी मान्य क्यों न होता?
ब्रह्मचर्य महाव्रतधारी जो होते...इसी मान्यता को नहीं मानते।।
तथाहि वस्त्रधारण परिग्रहरक्षण...राजनीतिकरण या वोट प्रदान्।
क्रय-विक्रय या विवाहकरण...सरकारी आदेशों का परिपालन।।
तिथि बन्धन रहित अतिथि होते...सूतक पातक दोष नहीं लगते।
जन्म-मरण/(जयन्ती) बन्धन नहीं मानते...धनी-गरीब भेद नहीं मानते।
शत्रु-मित्र भेदभाव नहीं करते...अपना-पराया नहीं मानते।।
राष्ट्रीय वैश्विक भेद नहीं मानते...वैश्विक एकता का भाव रखते।।
जाति राष्ट्र सीमा से परे वे होते...महान् सन्त विश्वसन्त ही होते।
अन्य के मनानुसार नहीं चलते...मनमाना काम भी नहीं करते।।
लोकविरुद्ध कार्य नहीं करते...विसंवाद कलह नहीं करते।
पक्ष-विपक्ष से रहित होते...सत्य साम्य शान्ति के पक्ष के होते।।
रीति-रिवाज रूढ़ि से परे वे होते...ख्याति पूजा लाभ को नहीं चाहते।
शरीर को भी अपना नहीं मानते...शरीर सम्बन्धी से निस्पृह होते।।
सन्मति की साधना सदा करते...सहमति की प्रतीक्षा/(कामना) नहीं करते।
जड़ से परे आत्मिक होते...'कनकनन्दी' को ये गुण भाते।।

बावलवाड़ा 5.12.2012, मध्याह्न 2:00

(मनोवैज्ञानिक (भावात्मक) चिकित्सा)

प्यार से तन-मन आत्मा होते हैं स्वस्थ्य

(प्यार से मनोदैहिक रोग होते हैं दूर)

(राग : 1. ज्योत से ज्योत....., 2. इतनी शक्ति हमें.....)
प्यार ही प्यार बढ़ाते/(बाँटते) चलो! रोग-कष्ट-मृत्यु घटाते चलो!
प्यार है वात्सल्य-अहिंसा-अपनत्व, स्व-पर-विश्व में भी लुटाते चलो/
(प्रेम की धारा बहाते चलो)।।ध्रुवपद।।
इसी से मिलती है सेवा-सुरक्षा, प्रसन्नता व जीने की चाह।
रोग प्रतिरोधक शक्ति भी बढ़ती, पुण्यकर्म की शक्ति भी बढ़ती।।

इसी से रोग शीघ्र न होते हैं, होने पर भी प्रबल न होते हैं।
शीघ्रता से रोग दूर भी होते हैं, तन-मन आत्मा भी सबल होते हैं।।
वैज्ञानिकों ने शोध भी किया है, प्यार से केमिकल/(रसायन) चेंज होता है।
धमनी में ब्लॉकेज कम होता है, हृदय शूल भी कम होता है।।
चिन्ता चिता सम जिन्दा जलाती, उपेक्षित लोग ज़ो अकेले होते/(हैं)।
चार गुना अधिक अकाल मरते हैं, दो गुना अधिक बुजुर्ग मरते हैं।।
रोग भी अधिक आ घेरते हैं, रोग भी अधिक प्रबल होते हैं।
शीघ्र भी रोग दूर न होते, प्रेम व अपनत्व जब न होते।।
समवशरण में जो जीव होते हैं, रोग शोक भय उन्हें न होते हैं।
भूख प्यास मृत्यु उन्हें न सताती, तीर्थंकर की महिमा महती।।
गणधर-ऋद्धिधारी ऋषि जो होते, रोगादि दूर भी उनसे होते।
महात्मा बुद्ध तथा ईसा मसीह, नाइटेंगल टेरेसा मदर भी हुए।।
प्यार से क्रूर पशु शान्त हो जाते, स्नेहिल शिशुसम प्यार करते।
वृक्ष भी अधिक फूल फल देते, दूधारू पशु दूध अधिक देते।।
भोजन अधिक मधुर है लगता, समय व्यतीत शीघ्र से होता।
तन-मन आत्मा स्वस्थ्य भी होते, 'कनकनन्दी' प्यार सबको देते।।

बावलवाड़ा 16.12.2012, रात्रि 3:10 से 4:17

लक्ष्य प्राप्ति के उपाय

(तर्ज : मोक्षपद मिलता है धीरे-धीरे.....)
लक्ष्य तो मिलता है.../(तो मिले है) धीरे-धीरे
लक्ष्य निर्धारो संकल्प करो, दृढ़ता लाओ
धैर्य से बढ़ो, लक्ष्य को पोओगे धीरे-धीरे (ध्रुवपद)
चिन्तन करो विवेक धारो
विघ्न-बाधा को पार भी करो, अनुभव आयेगा धीरे-धीरे।। (1) लक्ष्य...
संयम धरो ज्ञान बढ़ाओ,
अनपेक्षित की उपेक्षा करो, अपेक्षा प्रतीक्षा दंभ को छोड़ो।। (2) लक्ष्य...
संकीर्ण स्वार्थ को दूर भगाओ,
स्वालम्बी व साहसी बनो, संकल्प-विकल्प संक्लेश त्यागो।। (3) लक्ष्य...

दबाव प्रलोभन भय पछाड़ो,
ख्याति पूजा लाभ मोह को त्यागो, तीव्र होयेगी गति तेरी।। (4) लक्ष्य...
लक्ष्यनिष्ठ हो सम्पूर्ण शक्ति,
लक्ष्य प्राप्ति में हो पूर्ण प्रवृत्ति, लक्ष्य प्राप्ति होगी पूर्ण तेरी।। (5) लक्ष्य...
लक्ष्य ही तू ही प्राप्य भी तूही,
परिणाम भी परिणाम तू ही, ''कनक'' लक्ष्यमय सम्पूर्ण तू ही।। (6) लक्ष्य...

बावलवाड़ा 14.12.2012, रात्रि 10:12

''हर जीव सुख क्यों चाहता है?''

(शाश्वतिक सुख प्राप्ति के उपाय)

(राग : शायद मेरी शादी का....., आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)
हर जीव की चिर अन्तिम इच्छा...सुख प्राप्ति की होती है।
उसे प्राप्ति हेतु हर जीव भी/(ही)...विभिन्न कार्य करते हैं।।
कोई आहार निद्रा मैथुन व...परिग्रह से सुख चाहता है।
कोई सत्ता प्रसिद्धि हिंसा व...फैशन-व्यसनों से चाहता है।।
झूठ चोरी कुशील माया व...मद से सुख चाहता है।
झगड़ा कलह वाद-विवाद व...सिनेमा गाना से चाहता है।।
यह सब सही उपाय नहीं है...सुख प्राप्ति के मुख्य कारण।
आत्मानुशासन सत्य शान्ति बिना...अन्य कोई नहीं सही कारण।।
इसके बिना राजा-महाराजा...सेठ साहूकार या विद्वान्।
साधु सन्त दार्शनिक वैज्ञानिक...कोई न पाते हैं सुख निदान।।
इसलिये तीर्थंकर साधु गणधर...सर्व त्यागकर हुए संन्यासी।
आत्मानुशासन आदि के बल पर...पाये परम सुख अविनाशी।।
इसलिये वे विश्व से पूजित...चक्रवर्ती राजा से वन्दित।
शाश्वतिक सुख प्राप्ति हेतु ही...वन्दना करते वे चक्रवर्ती।।
सुख ही जीव का परम स्वभाव...सुख चाहते अंतः सर्व जीव।
'कनकनन्दी' तो निज सुख चाहता...उसे प्राप्ति हेतु ही प्रयासरत।।

बावलवाड़ा 13.12.2012, मध्याह्न 2:46

''भगवान् के सच्चे भक्त एवं कमबख़्त''

(राग : जिन्दगी इक सफर....., सुनो-सुनो हे.....)

पूजा प्रार्थना करने वालों को, भगवान् जानते दिव्यज्ञान से।
कुछ ही सच्चे भक्त होते हैं, अधिक होते कमबख़्त हैं।।ध्रु.।।

कुछ ही मेरा ध्यान करते, मेरे गुणगणों को स्मरण करते।
अधिकांश तो मतलबी होते, अपने स्वार्थ का ध्यान करते।।

मेरे गुणस्मरण व ध्यान के द्वारा, मेरा स्वरूप कुछ ही चाहे।
अन्य तो सत्ता-सम्पत्ति चाहते, सांसारिक सुख-भोग चाहे।। (1)

मेरा स्वरूप भक्त जानते, प्रार्थना पूजा का फल जानते।
मतलबी तो स्वार्थ को जानते, रूढ़ी-परम्परा से पूजा करते।।

सही भक्त सब कुछ पाते, सांसारिक सुख व मोक्ष पाते।
भक्ति से भुक्ति मुक्ति मिलंती, स्वार्थी तो संसार में घूमते।। (2)

भक्त तो होते सरल-सहज, पावन भाव-व्यवहार युक्त।
स्वार्थी तो होते अन्धभक्त, ईर्ष्या तृष्णा घृणा मदसहित।।

भाव में ही भगवान् बसते, भावानुसार भगवान् मिलते।
मन्दिर मस्जिद गिरजाघर, यह सबको सांकेतिक होते।। (3)

सही भगवान् को कम जानते, अतः प्रतीक को ही देते महत्त्व।
प्रतीक से प्रमुख को जानों, तब ही पूजा होगी महत्त्व।।

भगवान् तो पावन ज्ञानी होते, अहिंसा समता से युक्त होते।
इन्हीं गुणों के स्मरण प्राप्ति हेतु, 'कनक' भक्ति सह होते।। (4)

बावलवाड़ा 20.12.2012, प्रातः 7:13

(यह कविता श्रमणी सुविधेयमती की भावनानुसार बनी)

''कोई भी कार्य अचानक (अकारण) नहीं होता''

(असंतुलित भाव से होती हैं दुर्घटनायें)

(राग : तुम दिल की धड़कन.....)

भाव के अनुसार भावी होता है, यह सर्वत्र सत्य सिद्धांत है।
यह मुख्य कार्य कारण नियम, अन्य सब होते हैं गौण/(बाह्य) नियम।।

दुर्घटना या असफल हो जाना, अचानक नहीं हो जाते हैं।
कारण के बिना कार्य कभी भी, संभव ही नहीं हो पाता है।। (1)

चिन्ता तनाव व नशा के कारण, जब मन अस्थिर होता है।
काम भी व्यवस्थित नहीं हो पाता, बार-बार दोष भी हो जाता है।।
हर कार्य के होते अनेक कारण, कोई समझ पाये या न पाये।
माने या न माने कोई भी, कारण श्रृंखला सभी की होती है।। (2)

राम वनवास या सीता हरण, सुग्रीव मित्रता या रावण मरण।
सीता के अपवाद या वनगमन, सबके होते हैं कार्य कारण।।
अंजना सती का जो हुआ अपमान, श्रीपाल को हुआ कुष्ठ (व) अपमान।
उपसर्ग हुआ जो पार्श्वनाथ पर, कारण श्रृंखला का हैं अन्तिम परिणाम।। (3)

रोग-शोक या संयोग-वियोग, जन्म-मरण या हो अपमरण।
आत्महत्या या दुर्घटना आदि, सभी होते हैं सहित कारण।।
अतिवृष्टि अनावृष्टि बाढ़ भूकम्प, सुनामी बवण्डर व भूस्खलन।
ग्लोबल वार्मिंग या ग्लेशियर गलन, प्राकृतिक प्रकोपादि होते सहकारण।। (4)

विज्ञान अभी इसे खोज रहा है, धर्म तो इसे पहले से मान रहा है।
कार्यकारण या निमित्त उपादान, क्रिया-प्रतिक्रिया भी इसी का नाम।।
अनेकान्त सिद्धान्त या कर्मसिद्धान्त, मनोविज्ञान व बिसलोड सिद्धान्त।
ये सब सिद्धान्त भी यह सिद्ध करते, कोई भी काम अचानक नहीं होते।। (5)

आकस्मिक हठात् या अचानक, नियति या एकान्त कालवाद।
जो होना सो होयेगा मिथ्यावाद, अपरिवर्तनशील भाग्यवाद।।
ये सब एकान्त है मिथ्यावाद, अविचारित रम्य है तुच्छवाद।
विकास हेतु यह सब त्याज्य, 'कनकनन्दी' गहे सत्य-तथ्य।। (6)

बावलवाड़ा 17.2.2012, मध्याह्न 1:04

''सर्व अनुशासन के मूल आत्मानुशासन''

(आत्म अनुशासन महा अनुशासन)

(राग : मराठी-देहाची तिजोरी....., उघड़ दार देवा...आता...उघड़)
आत्म-अनुशासन महा-अनुशासन, जो सर्व शासन का मूल होता है।
व्यक्ति से लेकर वैश्विक स्तर के, लौकिक से आत्मिक स्तर के होता।।ध्रु.।।

यथा मूल से वृक्ष की वृद्धि होती, फूल-फल सह वृक्ष की स्थिति होती।
अनुशासनों की तथा ही स्थितिवृद्धि, आत्मानुशासन से ही संभव होती।।
मनानुशासन से आत्मानुशासन होता, इन्द्रिय व कषाय संयम युक्त होता।
शरीर समय व साधन संयम होता, जिससे सर्व शासन भी संभव होता।। (1)
आत्मानुशासन से शक्ति प्रगट होती, कार्यक्षमता में भी तीव्रता आती।
अन्य भी प्रभावित सहज से होते, समता शान्ति में तीव्रता आती।।
तीर्थंकर बुद्ध राम मसीह गाँधी, आत्मानुशासन से पाई प्रसिद्धि।
उनसे प्रभावित अन्य सहज होते, पशु भी तीर्थंकर के भक्त बनते।। (2)
तथाहि जो शासक राजा व्यक्ति, आचार्य शिक्षक संघनायक आदि।
आत्मानुशासन से जो युक्त रहते, उनके प्रभाव भी उत्तम होते।।
जो तानाशाही (व) उद्दण्ड क्रूर होते, अव्यवस्थित असंयमी भी होते।
वे स्व-पर-विश्व के अपकारी ही होते, स्व-पर-विश्व के नाशक होते।। (3)
संयमित अग्नि-वायु-नदी जो होती, उपकार युक्त प्रवाहित भीं होती।
असंयमी होते हैं बहु अपकारी, धन-जन-प्रकृति के नाशनकारी।।
तथाहि अनुशासन व उद्दण्डता में जानो, विकास नाशक क्रमशः मानो।
अनुशासन ही सदा पालनीय, 'कनकनन्दी' द्वारा सदा ग्रहणीय।। (4)

बावलवाड़ा 15.12.2012, रात्रि 9:33

पूजन-प्रार्थना का स्वरूप एवं फल

(परमात्मा के प्रतीक की पूजा-प्रार्थना के माध्यम से परमात्मा के गुणानुवाद-गुणानुस्मरण एवं गुणानुकरण ही यथार्थ से पूजा-प्रार्थना)

(राग : हे राम.....)

प्रभु तो अक्षय ज्ञानसुखमय, अनन्त वीर्यमय अविनाशी।
राग-द्वेष मोह रहित होने से, पावन वीतरागी समदर्शी।।
हे प्रभु! महाप्रभु!
निन्दक पूजक से अप्रभावी होते, शाप व वरदान नहीं देते।
सर्व जीव प्रति समभाव रखते, निज स्वरूप में लीन रहते।।
हर जीव स्व-स्वभाव काम से, कर्मों का आस्रव भी करता।
शुभाशुभ शुद्ध भाव-काम से, पुण्य पापमय व शुद्ध होता।।

पाप से विविध दुःख को भोगता, पुण्य से सांसारिक सुख को पाता।
शुद्ध से सर्वकर्म रहित हो जाता, अनन्त आत्मिक सुख को पाता।।
प्रभु के गुण स्मरण व भजन, पूजन ध्यान व अनुकरण से।
अशुभ भाव व पाप दूर होते, शुभ व पुण्य का होता ग्रहण।।
इसी से तन-मन स्वस्थ होते, विवेकपूर्ण होता सुज्ञान।
धन-जन सम्मान भी प्राप्त होते, सांसारिक सुख मिले विभिन्न।।
शुभ भाव जब बढ़ता जाता है, सांसारिक सुख न चाहता मन।
सन्यास व्रत को स्वीकार करके, शुद्ध से बनता प्रभु समान।।
इसी हेतु बाह्य आवलम्बन है, मूर्ति मन्दिर या धर्मस्थान।
पूजा सामग्री है प्रतीक आलम्बन, लता आरोहण में स्तम्भ समान।।
केवल स्तम्भ न होता है लता, प्रतीक भी न होता सही पूजन।
भाव को शुभ व शुद्ध बनाना, यथार्थ से है प्रार्थना पूजन।।
प्रभु को न धन-सम्पत्ति चाहिए, तथाहि मान-सम्मान पूजन।
न पूजा सामग्री को खाते भगवान्, इससे परे हैं वे आनन्दघन।।
दीपक से सूर्य न प्रकाशित होता, गुम्बद में आकाश न समाता।
तथाहि है भगवान् का स्वभाव, मानवीय संकीर्णता परे महान्।।
महान् उद्देश्य पवित्र भाव से, होते हैं सही भजन-पूजन।
इसी से पतित भी पावन बनता, इसी हेतु ''कनक'' करता पूजन।।

छाणी 26.12.2012, मध्याह्न 12:50

कब ये मानव महान् होगा

(राग : 1. आत्मशक्ति से ओतप्रोत....., 2. शत्-शत् वन्दन.....)
कब ये मानव महान् होगा, उदार सहिष्णु पावन होगा।
सत्ता सम्पत्ति बुद्धि को पाकर, स्व-पर विश्व हित करेगा।।
अपना-पराया भेदभाव बिन, वैश्विक कुटुम्ब मानेगा।
दीन-हीन व दंभ को छोड़कर, समता शान्ति से जियेगा।।
ईर्ष्या-द्वेष व घृणा को त्यागकर, सेवा व सहयोग करेगा।
हिंसा झूठ व चोरी त्यागकर, नीति व सदाचार पालेगा।।
शोषण आक्रमण युद्ध त्यागकर, विश्व में शान्ति को लायेगा।

जाति पंथ मत भाषा राष्ट्र परे, जीव में ईश्वर देखेगा।।
भौतिक बौद्धिक विकास से परे, सुभाव विकास भी करेगा।
संवेदना व पावन भावना से, आत्मिक विकास भी करेगा।।
इसी से ही सच्चा विकास होगा, दुःख दारिद्र भी मिटेगा।
समस्या विषमता विकृति दूर से, सुख समृद्धि को पायेगा।।
अन्यथा राजनीति कानून शिक्षा व, पुलिस-धर्म व धन से भी।
यथार्थ विकास कभी न होयेगा, प्रकाश बिन तम नहीं मिटेगा।।
उत्तम भाव व व्यवहार से ही, मानव महामानव होगा।
अन्यथा मानव दानव होकर, स्व-पर अहित सदा करेगा।
मानव तू महामानव बनकर, स्व-पर विश्व के हितकर।
इसलिए ही 'कनक' गुरुवर, आह्वान करे तुम्हें बारम्बार।।

परसाद 24.2.2013, रात्रि 9:03

''अप्रसिद्ध-अनाम भी अध्यात्मसन्त होते हैं आदर्श''

(राग : रात कली इक....., आत्मशक्ति से....., फूलों का तारों का.....)
धन्य-धन्य वे महात्मा जन...जो स्वात्मस्वरूप को जाना (है)।
स्वात्मा की ही उपलब्धि हेतु...स्वयं का परम लक्ष्य माना (है)।।ध्रु.।।
इसी हेतु ही संसार त्यागा...सत्ता-सम्पत्ति भोगों को त्यागा।
ख्याति पूजा लाभ को त्यागा...क्रोध-मान-माया-लोभ त्यागा।।
शत्रु-मित्र का भेद मिटाया...विश्वमैत्री भावना को भाया।
निन्दा-प्रशंसा को जड़ माना...जन्म-मरण विभाव माना।। (1)
तन-मन को स्वरूप न माना...इन्द्रियातीत आत्मा जाना।
हर जीव में परमात्मा माना...उसी रूप में स्वयं को जाना।।
आत्म-उपलब्धि के निमित्त...ध्यान-अध्ययन दत्त-चित्त।
मौन एकान्तवास में रत...लौकिक कार्यों से विरक्त।। (2)
जन-सम्पर्क व वार्तालाप...लोकरंजन क्रियाकलाप।
लोकप्रसिद्धि व धनलाभ...न चाहते लोकप्रभाव।।
सत्य-समता-शान्तिमय जीते...सन्तोष क्षमामय होते।
निस्पृह धैर्यशाली होते...वे अनाम भी महान् होते।। (3)

राजा-महाराजा चक्रवर्ती...विश्व प्रसिद्ध कोई भी हस्ती।
ऐसे महात्मा से छोटे होते...हाथी-घोड़े क्या महान् होते?
इसलिये वे महान् होते...उभय लोक सुखी मोक्ष पाते।
अन्य सभी तो दुःख भोगते...इह-परलोक में दुःखी होते।। (4)
अज्ञात भी सिद्ध समान...अज्ञात भी महात्मा जन।
होते आदर्श व पूजनीय...'कनक' के द्वारा वन्दनीय।। (5)

छाणी 13.1.2012, रात्रि 10:33 तथा 2:00

स्व-विश्वास ज्ञानाचरण ही मोक्षमार्ग एवं मोक्ष है

(करूणा एवं सम्बोधनपूर्ण राग-तू ही तेरा परम सत्य है.....)
तू ही तुझ पर विश्वास करो...यह ही आतम विश्वास/(आत्मदर्शन/सम्यक्दर्शन) है।
तू ही तेरा ज्ञान करो...यही ही आतमज्ञान/(सम्यक् ज्ञान) है।
तुझमें तू ही रमण/(चरण) करो...यही ही आत्म रमण/(चरण) है।
तीनों मय ही रत्नत्रय है...भेदाभेद/(मोक्षमार्ग) मय है।
इस हेतुऽऽ तुझे करना होगा...मोह राग-द्वेष गलन है...
पञ्च पापऽऽ त्यागना होगा...सप्त व्यसन अष्ट मद है...
मन वचनऽऽ व काय को भी...स्थिर भी करना होगा...
संकल्प-विकल्पऽऽ क्लेश त्यागकर...सरल-सहज होना होगा...(तीनों...मय)
धैर्य-क्षमाऽऽ शुचिता भाव...संयम-सत्य-समता को...
निस्पृह भावऽऽ वीतरागता...आत्मसात करना होगा...
सच्चे गुरु केऽऽ मार्गदर्शन...मनन-चिन्तन-अध्ययन...
शोध-बोधऽऽ व विश्लेषण...सतत निष्ठा से करना होगा...(तीनों...मय)
ख्याति-पूजाऽऽ लाभ त्यागकर...अपना-पराया भूलकर...
ईर्ष्या-तृष्णाऽऽ को छोड़कर...स्व में सन्तोष होना होगा...
इसी से होगाऽऽ आत्मानुभव...ज्ञानानन्दमय रस भाव...
यह ही तेराऽऽ निज भाव...सच्चिदानन्दमय स्वभाव...(तीनों...मय)
इसे ही कहतेऽऽ हैं मोक्षमार्ग...इसे ही कहते सत्यमार्ग...
इसे ही कहतेऽऽ परमधर्म...परिनिर्माण/(परिनिर्वाण) आत्मधर्म...

अन्य सब तो/(पर)ऽऽ अनात्म है...निमित्त बन्ध संयोग है...

स्वयं मेंऽऽ स्वयं को ही पाना (है)...'कनक' अन्यत्र न जाना है...(तीनों...मय)

बावलवाड़ा 7.12.2012, प्रातः 6:04

(इस कविता के विशेष परिज्ञान हेतु कवि द्वारा रचित ''अपुनरागमन पथ'' एवं ''अनेकान्त के प्रकाश में मोक्षमार्ग'' ''अनेकान्त सिद्धान्त'' आदि कृतियों का अध्ययन करें।)

व्यंगात्मक कविता

आधुनिक चार्वाक-म्लेच्छ मानव के भाव-व्यवहार

(चाल : 1. दुनियाँ में हम आये हैं तो....., 2. दे दी हमें आजादी.....,
3. हो दीनबन्धु....., 4. तू हिन्दू बनेगा.....)

जीवन मिला है तो इसे जीना ही पड़ेगा
जैसा वैसा भी हो इसे ढोना ही पड़ेगा...(ध्रुवपद)...

सब कहते हैं मानव जन्म मिलना दुर्लभ
खाओ पीओ मजा करो यह ही है लाभ
नीति नियम सदाचार ये सब बेकार
स्वर्ग-नरक-पुण्य-पाप ये सब बेकार...जीवन मिला...(1)

मरने के बाद जलाया या गाड़ा जाता शरीर
फिर भी स्वर्ग-नरक की बातें करना बेकार
धर्म की बातें वे ही करते जो होते बेकार
हम तो पढ़े-लिखे ज्ञानी आधुनिक प्रवर...जीवन मिला...(2)

करो पढ़ाई नौकरी नेता-अभिनेता बनो
व्यापार-शोषण-भ्रष्टाचार से धनी बनो
फैशन-व्यसन करो जो मन कहे वो सब करो
चोरी-ठगी से धन कमाकर ऐश ही करो...जीवन मिला...(3)

पढ़ाई बड़ाई चमड़ी दमड़ी चार हैं पुरुषार्थ
अर्थ काम सर्वस्व हम न माने धर्म व मोक्ष
ऐसा जो भाव-व्यवहार करे वे नहीं सही मानव
मानव आकार दानव आधुनिक म्लेच्छ मानव...जीवन मिला...(4)

केवल सत्ता-सम्पत्ति से मिलती है अशान्ति

इससे मिले तनाव रोग तिरस्कार कुख्याति
मानव से महामानव बनो तुम पुनः भगवान्
'कनकनन्दी' का तुम्हें आशीष, बनो सुज्ञानवान्...जीवन मिला...(5)

बावलवाड़ा 14.12.2012, रात्रि 12:58

प्यारे बच्चों के लिए मेरा सन्देश

(चाल : 1. चन्दा मामा....., 2. तुम दिल की धड़कन.....)

प्यारे-प्यारे बच्चे हो...दिल के तुम (तो) सच्चे हो...
सहज-सरल से ऊँचे हो...भोले-भाले अच्छे हो...
नटखट व हठी हो...हँसी-मजाक में मीठे हो...
खेल-कूद में मस्त हो...मीठी नींद में चुस्त हो...
रोना-हँसना काम हो...चिन्ता मुक्ति का धाम हो...
भेद-भाव से मुक्त हो...प्रेम-मैत्री से युक्त हो...
सबसे शिक्षा लेते हो...पुस्तक बिना सीखते हो...
प्रकृति की पाठशाला में/(से)...बिना दबाव पढ़ते हो...
बड़ों के तुम गुरु हो...सहजता की मूरत हो...
सीखते नहीं बड़े हैं...विकृति/(कृत्रिमता) से भरे हैं...
तुम ऐसा न बनना...बाल/(अच्छे) भाव को न त्यजना...
अच्छे भावों को बढ़ाना...महामानव ही (है) बनना...
महान् काम ही करना...विश्व में शान्ति फैलाना...
भविष्य तुम्हारा जमाना...'कनक' सन्देश मानना...

परसाद 17.2.2013, रात्रि 9:34

आदर्श विद्यार्थी के कर्त्तव्य

(राग : परदेशियों से न.....आत्मशक्ति से.....)

विद्यार्थी यदि तुम्हें ज्ञान है पाना, तन-मन-आत्मा को स्वस्थ (भी) रखना।
सम्यक् आहार व व्यायाम विश्राम/(शयन), अध्ययन चिंतन व प्रयोग करना।। (ध्रुव)
प्रासुक शुद्ध ताजा पौष्टिक भोजन, दूध घी व फल और व्यञ्जन।
घर का बना हुआ शाकाहार भोजन, अखरोट बादाम करो हे! सेवन।

चलना दौड़ना खेलना तैरना, प्राणायाम व योगासन व्यायाम।।...(1)
वन उपवन नदी मैदान भ्रमण, ग्राम खेती व तीर्थ पर्यटन।
शयन/(विश्राम) भी तुम भरपूर लेना, बालवय में दश घंटा सोना।
किशोरवय में नौ घंटा सोना, युवावय में आठ घंटा (है) सोना।।...(2)
कम सोने से समस्या घनेरे, तन-मन के भी रोग आ घेरे।
दोनों का विकास सही न होता, आगें का विकास मंद हो जाता।
ग्रोथ हार्मोन उत्पादन कम होता, शरीर **रक्त से ग्लूकोज कम लेता**।।...(3)
हाइपर-एक्टिविटी भी बढ़ जाता, किसी भी काम में ध्यान न लगता।
स्मरण शक्ति भी दुर्बल होती, **ग्रिलिन हार्मोन** की उत्पत्ति होती।
इसी से भूख भी अधिक लगती, मोटापा होने की समस्या भी होती।।...(4)
स्ट्रेस हार्मोन भी तेजी से बढ़ता, मूड में चैंज भी अधिक है होता।
सुस्ती आती व स्फूर्ति भी भागती, गहरी नींद जब पूर्ण न होती।
एकाग्र मन से ही अध्ययन करना, विषय-वस्तु को सही (से) समझना।।...(5)
जिज्ञासा व रुचि सहित पढ़ना, तोता रटन्त पाठ कभी न पढ़ना।
स्वयं भी अध्ययन घर में करना, ट्यूशन नकल कभी न करना।
कोर्स की किताबों से समग्र पढ़ना, परीक्षा हेतु ही कुँजी से न पढ़ना।।...(6)
स्कूल के पाठ से ही ज्ञानी/(श्रेष्ठ) न बनोगे, श्रेष्ठ कार्य भी करने होंगे।
दया दान सेवा करने होंगे, श्रेष्ठ साहित्य भी पढ़ने होंगे।
आध्यात्मिक नैतिक शिक्षा को गहो, समाज परिवेष से तथा ही सीखो।।...(7)
''इमिटेशन न्यूरॉन'' सीखते बीस प्रतिशत, समाज माहौल से यह प्रतिशत।
महान् लक्ष्य युक्त कर्त्तव्य करो, आदर्शमय ही जीवन है करो।
संकीर्ण स्वार्थ से परे विचारो, आशीष 'कनकनन्दी' का विकास करो।।...(8)

छाणी 25.12.2012, रात्रि 12:09 तथा 4:14 व 1:04

''प्यारे बच्चों ! खेल से अच्छा सीखो''

(खेल की संस्कृति तथा विकृति)

(राग : हम घर से किताबें....., सुनो-सुनो हे दुनियाँ....., बस्ती-बस्ती.....,
या वायाच्या बसुनी विमानी.....)
चलो हे बच्चों! तुम्हें बताऊँ/(सुनाऊँ), खेल की आत्म-कहानी भी।

जिससे तुम भी जान पाओगे, खेल की अच्छाई-बुराई भी।।ध्रु.।।

खेल की कथा अति प्राचीन है, तथाहि अति व्यापक भी।
इसके विभिन्न रूप को जानो, बुरा त्यागो अच्छे खेलों भी।
जिससे तुम्हें लाभ होगा, तन-मन के बहु स्वास्थ्य भी।। (1)

अरबों वर्ष पहले से ही भोग भूमि के काल में भी।
खेल-खेल में ही आर्य शिशु/(लोग) शीघ्र बढ़ते थे सुख से ही।
मानव पशु-पक्षी स्वर्ग के देव क्रीड़ा प्रेमी होते हैं।। (2)

खेल से विभिन्न शिक्षा मिलती, तन-मन स्वस्थ्य भी होते।
माँसपेशियाँ मजबूत होती, हड्डी भी मजबूत होती है।
सर्व शरीर भी क्रियाशील होता, श्वासक्रिया तीव्र होती है।। (3)

शरीर से पसीना के द्वारा, टॉक्सीन भी निकल जाता है।
दूषित वायु भी निकल जाती, रक्त भी शुद्ध हो जाता है।
रक्त संचार भी तीव्र होता, हाजमा/(पाचन तंत्र) ठीक भी होता है।। (4)

इससे तन-मन स्वस्थ्य होते, तथा ही हल्का व सक्रिय।
भोजन पाचन सही होता, दिमाग होता है सक्रिय।
मन में एकाग्रता आती, शरीर का बनता सौन्दर्य।। (5)

मीठी निन्दियाँ अच्छी आती, न आते कुस्वप्न प्रचुर।
पढ़ाई में मन लगता, पाठ भी होते हैं स्मरण।
प्रेम संगठन की भावना बढ़ती, वैरत्व भी होता दूर।। (6)

खेल से भी परिज्ञान होते, भाव क्षमता भविष्य।
शारीरिक श्रम स्वावलम्बन का, पाठ भी पढ़ो है अवश्य।
समन्वय व कर्त्तव्यबोध, खेल की शिक्षा विशेष।। (7)

खेल के और भी पक्ष होते, जो होते क्रूर बेकार।
दुष्ट भाव से खेल खेलना, हिंसा कपट शिकार।
जुआ खेलना कष्ट देना, हिंसक व पशु संहार।। (8)

खेल से प्रेम त्याग सीखो, हार जीत के न भाव रखो।
निस्पृह समता व विश्व बन्धुत्व, भाव व व्यवहार सीखो।
'कनकनन्दी' का आशीष तुम्हें, महान् बनो प्यारे बच्चों।। (9)

छाणी 5.1.2013, रात्रि 10:05

''सरल रेखा के सम होता है सत्य-न्याय''

(नवकोटी से पाँच पापों को चार कषायों से करना अन्याय, इससे भिन्न न्याय)

(वैश्विक सत्य-न्याय का सार)

(राग : दे दी हमें आजादी बिना खड्ग बिना.....)

मानव ने कानून/(न्याय) को जटिल बना दिया,
संकीर्ण स्वार्थ हेतु बेईमान/(अन्याय) बना दिया।
न्याय तो सीधा-सादा सत्य व समता है,
जीओ व जीने दो वैश्विक न्याय है।।
स्वयं भी सुखी रहो अन्य भी सुखी रहे,
आत्मानि प्रतिकूलानि परेषां न समाचरे।
मन व वचन काय व कृत कारित,
अनुमत से कुकृत्य जो होते वे अन्याय।।
कुकृत्य है हिंसा असत्य चौर्य मैथुन,
परिग्रह संचय सहित अन्य शोषण।।
क्रोध-मान-माया व लोभ से कृत कर्म
स्व-पर हानिकर सर्व अन्याय कर्म।।
इसी से विपरीत सर्व ही न्याय कर्म,
अन्याय संशोधन सर्व न्यायिक कर्म।
इसी के निर्णायक होते वे न्यायाधीश,
कुकृत्य परिहार करते न्यायाधीश।।
सर्वोच्च न्यायाधीश होते केवली/(शास्ता)
निर्दोष समदर्शी आप्त व सर्वज्ञाता।
अनाप्त जन द्वारा बनाये जाते जो न्याय,
पक्षपात व दोष पूर्ण वे होते न्याय।।
तानाशाही व लूटेरे राजा से बने जो न्याय,
औपनिवेशिक न्याय न होते सही वे न्याय।
यथा रावण कंस हिटलर के जो न्याय,
ब्रिटेन द्वारा बनाये गये औपनिवेशिक न्याय।।
ऐसे न्याय के द्वारा किये जाते जो न्याय

वे तो बन्दर-न्याय व अन्यायपूर्ण-न्याय।
न्याय तो सरल रेखा के समान होता,
कुटिल जटिल व कृत्रिम नहीं धोखा।।
असत्य न्याय ही इसी से भिन्न भी होता,
बन्दर-न्याय व शकुनि-न्याय सम होता।
लिखित न्याय से ही न्याय न सही होता,
कालाकोट टाई से कोई न जज होता।।
साक्षी मात्र से न्याय पूर्ण न सत्य होता,
दलालों-वकील से न्याय न पूर्ण होता।
सम्यग्ज्ञान ही प्रमाण जो सम सत्य होता,
निर्दोष प्रामाणिक निष्पक्ष न्याय होता।।
इसी से ही निर्णय शीघ्र व सत्य होता,
सुयोग्य वैद्य यथा रोग को दूर करता।
राजा विक्रमादित्य अभयकुमार सम,
होते जो न्यायाधीश देते हैं न्याय साम्य।।
न्याय न व्यापार है नहीं है प्रतिशोध,
चिकित्सा समान न्याय तो करता संशोधन।
सर्वोच्च है दण्डदाता होता है कर्म,
'जैसी करनी वैसी भरनी' देता है कर्म।।
दोष परिमार्जन ही न्याय का कर्म,
जिससे मिलता जीवों को समता शर्म।
प्रामाणिक जीव स्वयं (का) होता न्यायाधीश
दण्डनीय होता वह जो है होता सदोष।।
आत्म विश्लेषण ही यथार्थ अभिवक्ता/(वकील),
दोष परिशोधन ही न्याय सकल।
सर्वोच्च न्याय व्यवस्था दिया था भारत,
आर्थिक सामाजिक से आध्यात्मिक तक।।
वह देश आज न्याय में पिछड़ा हुआ
सत्यानवें (97) देशों में अठहत्तर (78) स्थान में रहा।
रूल ऑफ लॉ इंडेक्स (2012) जो रिपोर्ट आया

वर्ल्ड जस्टिस प्रोजेक्ट द्वारा जो रिसर्च हुआ।।
उसमें यह स्थान मान भारत पाया
श्रीलंका से भी भारत पिछड़ गया।
करोड़ों केसो का अभी तक न हुआ निर्णय,
निर्णय में लगेगा और भी सैकड़ों साल।
धन-जन-समय का होता दुरूपयोग
सुख-शान्ति समृद्धि का होता वियोग।।
जहाँ हो राग-द्वेष मोह व पक्षपात
भय व प्रलोभन न होता न्याय सत्य।
इन्हीं दोषों से रहित होता है सत्य न्याय
'कनकनन्दी' को प्रिय है जो सत्य न्याय।।

बावलवाड़ा 29.11.2012, रात्रि 1:34 तथा मध्याह्न 2:17

''प्राकृतिक सुखी जीवन-स्मरण''

(राग : चन्द दिनों का....., तू ही तेरा परम.....)

कहाँ गया वह सुखी जीवन...भोला भाला सह जीवन।
दिखावा तनाव से रिक्त जीवन...प्रदूषण मुक्त वातावरण।।ध्रु.।।
बाल्यकाल का निश्चिन्त जीवन...खेलकूद व मस्त/(स्वस्थ) जीवन।
खाना-पीना घूमना-फिरना...इसी से विभिन्न शिक्षा लेना।।
सात वर्ष में स्कूल जाना...अंक अक्षर संस्कार सीखना।
नीति धर्म सदाचार सेवा...प्रेम संगठन आदर्श जीवन।। (1)
प्राकृतिक वह जीवनचर्या...हर मानव की दैनिकचर्या।
शीघ्र सोना व शीघ्र उठना...प्रभु स्मरण सह कार्य करना।।
प्रातः भ्रमण व मल त्याग...दूर एकान्त में स्वच्छ स्थान।
शुचिस्नान दन्तधौवन...प्रासुक नदी व कूपस्थान।। (2)
शुचिता सहित मन्दिर गमन...पूजा प्रार्थना ध्यान-अध्ययन।
साधुओं के प्रवचन सुनना...साधुओं को आहार देना।।
परिवार सहित भोजन करना...कृषि वाणिज्य सेवा करना।
न्याय नीति से जीविका चलाना...मिलावट भ्रष्टाचार न करना।। (3)

सन्तोष सदाचार युक्त जीवन...तनाव रहित सादा जीवन।
प्रेम संगठन सहयोग सहित...उदार धार्मिक कर्त्तव्य सहित।।
साधु-साध्वी वृद्धों की सेवा...असहाय रोगी गरीब सेवा।
पशु-पक्षी व प्रकृति संरक्षण...माता-पिता सेवा सह जीवन।। (4)
यह जीवन अभी घट रहा है...ईर्ष्या तृष्णा भाव बढ़ रहा है।
भ्रष्टाचार मिलावट बढ़ रहे हैं...प्रदूषण तनाव बढ़ रहे हैं।।
आबाल वृद्ध भी सभी संत्रस्त...आपाधापी जीवन में नहीं सन्तोष।
भौतिकता की बाढ़ आई है...आध्यात्मिकता नहीं रही है।। (5)
अन्धी दौड़ में लगे हुए हैं...प्रतिस्पर्द्धा में लगे हुए हैं।
जिससे दुःखी हो रहे हैं...'कनक' सबको चेता रहे हैं।। (6)

छाणी 22.12.2012, मध्याह्न 3:18

''सदाचार बिना ज्ञान कुज्ञान''

(सदाचार बिना साक्षरा होता है राक्षस)

(राग : आत्म शक्ति से....., तुम दिल की धड़कन.....)
'हिताहित प्राप्ति परिहार समर्थ' जो होता सो सुज्ञान है।
हित ग्रहण व अहित परिहार, जिससे होता सो ज्ञान है।।
सम्यग्यज्ञानं प्रदीपवत् यथावद्वस्तु निर्णीतः होता है सो 'सुज्ञान।'
यथा दीपक से अन्धकार हटता, होता है सो हि सुज्ञान।।
'स्वापूर्वार्थ व्यवसायात्मकं ज्ञानं' होता है सो 'प्रमाणम्।'
स्वयं को तथा अज्ञात तत्त्व जो जानता है सो प्रमाणम्।।
'स्वोन्मूखतया प्रतिभासनं स्वस्य' होता है सो 'व्यवसाय।'
स्वानुभवरूप आत्मनिश्चय को कहा जाता है व्यवसाय।।
'णिज्जावगो य' होता है 'णाण' खेवटिया सम होता है ज्ञान।
जो संसार रूपी दुःख सागर से जो पार उतारे होता सो ज्ञान।।
किन्तु शाब्दिक ज्ञान जो होता अथवा तोता रटन्त जो ज्ञान।
आत्मसात् बिना अपाचक ज्ञान नहीं होता है यथार्थ ज्ञान।।
ऐसा ज्ञान से न विवेक होता नहीं होता है तमहरण।
शब्द अर्थ में मूढ़जनों को नहीं होता है परम ज्ञान।।

यथा अन्धा व्यक्ति दीपक से भी, नहीं देख पाता है वस्तु स्वरूप।
स्वानुभव बिना रटन्त ज्ञानी, नहीं जान पाता है सत्य स्वरूप।।
"बिना जानते दोष गुणन को कैसे त्यजिये गहीये" ज्ञान।
प्रकाश में भी अन्धा व्यक्ति, नहीं जान पाता रजु या नाग।।
अपच भोजन होता है रोगकारी, तथाहि होता है अपंच ज्ञान।
ज्ञानमद से होता मदमस्त, अधिक करता है पापमय काम।।
यथा रावण कंस भस्मासुर हिटलर, जरासन्ध सद्दाम हुसैन।
आतंकवादी नेता अभिनेता, भ्रष्टाचारी पढ़े-लिखे जन।।
'हतं ज्ञानं क्रिया हिनं' चारित्र बिना ज्ञान है कुज्ञान।
'चारित्र बिना साक्षरा एव' होता है राक्षस दुष्ट दुर्जन।।
ज्ञान का फल होता चारित्र, यथाहि फूल से बनता फल।
ज्ञान से बनो गुणी सज्जन, कनकनन्दी का यह अह्वान।।

छाणी 30.12.2012, रात्रि 5:05

बातें ही बातें मत करो

(राग : छोटी-छोटी गैया.....)
बातें ही बातें व बातें करते, उद्देश्य शिक्षा हीन बातें करते।
द्रव्य क्षेत्र काल भाव नहीं देखते, उचित कार्य को भी नहीं करते।।
सत्य-तथ्य हीन भी बातें करते, समय शक्ति को भी नष्ट करते।
भूत घटनाओं की बातें करते, पिष्ट-पोषण रूप से बातें करते/(गप्प हाँकते)।।
क्या किया क्या कहा क्या सुना, क्या खाया क्या पीया क्या पहिना।
कहाँ गया कहाँ आया कहाँ बैठा, कहाँ सोया कहाँ लेटा कहाँ उठा।।
बेचना खरीदना व लेना-देना, जनम-मरण व रोना-धोना।
नहाना धोना व खाना बनाना, निन्दा चुगली व कटु कहना।।
इत्यादि बातें अनर्गल बकते, हँसी-मजाक व थट्टा/(व्यंग्य) करते/(कसते)।
अतर्क वितर्क कुंतर्क करते, मिया मिट्ठू रूप से डींग हाँकते।।
लड़ाई-झगड़ा व गाली बकते, कपोल कल्पित अंटसंट बोलते।
तन-मन आत्मा को दोषी बनाते, शब्द प्रदूषण भी खूब करते।।
हित मित प्रिय नहीं बोलते, इससे अन्य को भी बाधा देते।

सत्य वचन व्रत नहीं पालते, मानसिक स्थिरता को नहीं पाते।।
महान् कार्य से वंचित होते, मानव जन्म को व्यर्थ गँवाते।
ध्यान अध्ययन से वंचित होते, ज्ञान-अनुभव से रहित होते।।
अतएव हितमित प्रिय बोलो, वचन समिति व मौन पालो।
महान् कार्य की साधना करो, 'कनक' के आशीष सत्य बोलो।।

बावलवाड़ा 29.11.2012, मध्याह्न 3.07

''उपकरणों के सुप्रयोग एवं कुप्रयोग''

(सुप्रयोग से विकास तो कुप्रयोग से विनाश)

(राग : यमुना किनारे श्याम....., सावन का महीना.....)
उपकरणों से उपकार किया ही करो...स्व-पर-विश्व का सहयोग भी करो।
इनका दुरूपयोग कभी न करो...स्व-पर का अहित किया न करो।।
इनका आविष्कार हुआ कर्मभूमि में...अरबों वर्ष पहले आदि काल में।
प्राकृतिक होते थे पूर्व भोगभूमि में...कल्पवृक्ष प्रदत्त थे उसी काल में।।
आत्मरक्षा नदीपार आदि के लिये...दण्ड नौकादि निर्माण हुए आर्यों के लिये।
असिमसिकृषिवाणिज्यशिल्प के लिये...उपकरण बनाये गये आर्यजनों के लिये।।
चौदह कुलंकर तथा ऋषभदेव के द्वारा...आविष्कार किये गये स्वज्ञान के द्वारा।
गृह व गृहोपकरण अलंकार यानादि...आविष्कार हुए थे कर्मभूमि के आदि।।
अस्त्र-शस्त्र रथ ब्रह्मास्त्र पुष्पक विमान...निर्माण हुए थे शल्य क्रिया उपकरण।
उत्तरोत्तर उपकरण भी बढ़ते गये...वैज्ञानिक युग में और भी अधिक हुए।।
वाष्पचालित यंत्रों का हुआ निर्माण...विद्युत् चालित पुनः बने उपकरण।
रेल बस कार तथा कल-कारखाना...हवाईजहाज रेडियो व सिनेमा।।
फ्रीज वॉशिंग मशीन कंप्यूटर मोबाईल...विविध गृहोपकरण व अन्तरीक्षयान।
इसी से बहुत कुछ लाभ हो रहे हैं...यातायात व संचार तीव्र हो रहे हैं।।
पृथ्वी तो एक ग्राम समान हो गई...सुख-सुविधा की भी बाढ़ आ गई।
बहुविध अपकार भी बढ़ रहे हैं...प्रकृति के बहुविध प्रदूषण भी हो रहे हैं।।
पृथ्वी का तापमान भी बढ़ रहा है...बहुविध प्रदूषण भी हो रहे हैं।
यंत्र चालित मानव तो हो रहे हैं...फैशनी-व्यसनी उत्श्रृंखल भी हो रहे हैं।।
परस्पर की दूरियाँ भी बढ़ रही है...प्राकृतिक आपदायें आ रही हैं।

शारीरिक निष्क्रियता बढ़ रही है...मोटापा की समस्यायें बढ़ रही हैं।।
मधुमेह हृदयाघात रक्तचाप कैंसर...मानसिक रोग बढ़ रहे अनेक प्रकार।
यातायात में दुर्घटनायें बढ़ रही हैं...लाखों की अकाल मृत्यु हो रही है।।
मानसिक शान्ति भी घट रही है...मानवीय समस्यायें बढ़ रही हैं।
उपकरण भी भस्मासुर बन रहे हैं...विकास भी विनाश बन रहे हैं।।
आध्यात्मिक से विनाश रुक जायेगा...'कनक' का विचार सफल होगा।
अपरिग्रह सिद्धान्त का पालन करो...विश्वशान्ति के लिये प्रयास करो।।

छाणी 31.12.2012, रात्रि 10:55

''अधिकांश मानव ज्ञानी-गुणी क्यों न होते?''

(राग : आत्मशक्ति से ओतप्रोत)

हर मानव ज्ञानी गुणी न होते...सामान्य ज्ञान से भी रहित होते।
सम्यक् विचार आचार न करते...हित-मित-प्रिय भी न बोल पाते।।
इसमें अनेक कारण होना सम्भव...अंतरंग-बहिरंग होना सम्भव।
पूर्व उपार्जित कर्म या जीनोम...लक्ष्य रुचि या साधना सम्भव।।
महान् लक्ष्य से रहित होते...जन्म लिये तो जीवन ढोते।
खाना-पीना व मजा करते...फैशन-व्यसन व सोते रहते।।
मानते ग्रन्थों में सुज्ञान होते...तथापि अध्ययन नहीं करते।
आचरण अनुभव से रहित होते...ज्ञानी गुणी से शिक्षा नहीं लेते।।
जीवन में अनेक दोष करते...शिक्षा लेकर भी न गुणी बनते।
देख सुनकर भी न ज्ञानी बनते...निष्क्रिय प्रमाद से जीवन जीते।।
हर गलती से बहु शिक्षा मिलती...सजा से शिक्षा बहुत मिलती।
उससे जो सुधरे ज्ञानी/(गुणी) बनते...अनुभव से ज्ञानी सुदृढ़ होते।।
इससे अनेक साधु महात्मा बने...वैज्ञानिक निर्माता लेखक बने।
अशोक अंगुलीमाल व दृढ़प्रहरी...तुलसीदास एडीसन तूकारी।।
महात्मा गाँधी अब्राहिम लिंकन...इसी सन्दर्भ में दृष्टान्त महान्।
ठोकर खाकर ठाकुर बनते...ताड़न तपन से घड़ा बनते।।
अन्धपाषाण के सम अनेक होते...तपन ताड़न से शुद्ध न बनते।
तम्बाखू सेवी को बहु रोग भी होते...स्वेच्छा से या सुझाव से न त्यागते।।
रावण कंस दुर्योधन सम होते...देख सुन विवेक से काम न लेते।

स्वेच्छा से जब कोई सुधार करे...बाह्य निमित्त सहयोग भी करे।।
स्वयं जो सुधरना नहीं चाहते...सच्चे गुरु को भी नहीं मानते।
गुरु को भी अपकारी शत्रु मानते...स्व-दोषों को भी अन्य पर मढ़ते।।
अध्ययन मनन व अनुभव से...देख सुनकर व गुण-दोषों से।
ज्ञानी गुणी बनने के बहु उपाय...'कनक' की शिक्षा हेतु हर उपाय।।

प्रिय बच्चों! पतंगबाजी से शिक्षायें प्राप्त करो

(राग : आओ बच्चों! तुम्हें दिखाये....., या वारयाच्या बसुनी विमानी.....)
आओ बच्चों! तुम्हें बताऊँ...शिक्षा पतंगबाजी की।
ऊँचे लक्ष्य तथा उड़ान की...शिक्षा पतंगबाजी की।।ध्रु.।।
''उड़ी रे पतंग...ऽऽऽ, चली रे पतंग...ऽऽऽ''
अनुशासन रूपी डोरी की...तथा गतिशील चक्री की।
सापेक्षता की क्रियाशीलता व...उत्साह सहित रुचि की।।
सकारात्मक वायु की दिशा में...बढ़ाओ अपने भाव को।
सबसे महान् आदर्श बनने का...करो है सत्प्रयत्न को।। (1)
खेल-खेल से प्रेम सीखो...तथा सहयोग संगठन को।
अन्य को बिना काटकर के...पाओ है अपनी मंजिल को।।
सहज सरल लघुता धारो...प्रगति होगी ऊँचाई की।
अनेकता रूपी ज्ञानदीप से...फैलाओ ज्योति भावना की।। (2)
दुर्घटनाओं से बचते बढ़ो...संक्रमण करो जीवन को।
संक्रमण तेरा सम्भव क़रे...भावी जीवन के आदर्श को।।
अगर-मगर शोरगुल छोड़कर...उत्तरोत्तर विकास करो।
अनन्त तेरा विकास क्षेत्र...क्षुद्र में ही न विश्वास करो।। (3)
अनुशासन रूपी डोरी के बिना...गति होगी भटकाव की।
महान् लक्ष्य भावना बिना...प्रगति होगी विकास की।।
खेल से यदि शिक्षा लोगे...सर्वांगीण होगा विकास भी।
'कनकनन्दी' के आशीष तुम्हें...आध्यात्मिक हो विकास भी।। (4)

छाणी 12.1.2013, मध्याह्न 12:34

(यह कविता श्रमणी सुविधेयमती की भावना से बनी।)

''अनेक भाषा कविता-विषय के ज्ञान से लाभ''

(बहुविध ज्ञान से बुद्धि प्रखर एवं युवा रहती)

(राग : या वारयाच्या बसुनी (मराठी)....., आओ बच्चों! तुम्हें दिखाये.....)

सुनो हे बच्चों! तुम्हें बताऊँ...अनेक भाषा के लाभ को।
तथा ही विषय और कविता के...विविध लाभ भी तुमको।।ध्रु.।।

अनेक भाषा जानने वालों के...दिमाग अधिक तेज होते हैं।
मल्टीस्किल्ड होने के कारण...शीघ्र प्रतिक्रिया करते हैं।।

सत8त सक्रिय दिमाग होने से...दिमाग शीघ्र न बूढ़ा होता।
प्री-फ्रंटल व एंटीरियर कॉर्टिक्स में...अधिक सक्रियता गुण होता।। (1)

अतएव बच्चों! कम आयु में ही...सीखो हे! अधिक भाषा ज्ञान।
अनेक भाषा भी प्रयोग करो...जिससे बनोगे ज्ञानी महान्।।

श्रेष्ठ कविता को जानने वाले भी...होते अधिक दिमाग से तेज।
मूल भाषा की कविता गाने से...दायाँ दिमाग होता अधिक तेज।। (2)

इससे मैमोरी अधिक होती...भावनायें भी प्रबल होती।
अनुभवों को भी दिमाग जोड़ता...कविता सम्बन्धी विषय-वस्तु को।।

नये विचार भी जन्म लेते हैं...अनुभव से कविता सोचते।
नये शब्द व वाक्य को सोचते...कवि के भावों से सहित होते।। (3)

इससे दिमागी व्यायाम होता...जिससे दिमाग स्वस्थ होता।
मानसिक रोग भी कम होते...बौद्धिकता का विकास होता।।

तथा ही बहुविध ज्ञान से होता...उदार व्यापक भाव होता।
समीक्षा समन्वय शोध होता...हिताहित विवेक अधिक होता।। (4)

सात सौ अठारह भाषायें...केवली जानते सर्वभाषायें।
सर्व विषयों के होते ज्ञाता भी...सर्व विश्व के सम्पूर्ण ज्ञाता भी।।

गणधर आचार्य गौतम बुद्ध...ज्ञात थे अनेक भाषा विषय।
अनेक विद्वान् ऋषि दार्शनिक...लेखक कवि भी होते तथाहि।। (5)

हमारा भारत विश्वगुरु रहा...ज्ञान-विज्ञान का देश भी रहा।
तुम भी बच्चों! महान् बनों...'कनकनन्दी' का आह्वान सुनो।। (6)

छाणी 15.1.2013, रात्रि 1:43

"शिक्षाक्षेत्र-शिक्षितों के कुकृत्य न हो तो कैसे?"

(कुकृत्य के कारण संकीर्ण स्वार्थ एवं निवारणोपाय)

(कुशिक्षा का कुफल एवं सुशिक्षा का सुफल)

(राग : आत्म शक्ति से....., नरेन्द्र छन्द)

शिक्षा क्षेत्र व शिक्षितों में आज जो कुकृत्य हो रहे हैं।
उसके शोध व सुधार हेतु मेरे कुछ विचार हो रहे हैं।।ध्रु.।।

शिक्षा से मानवों का तो सर्वांगीण विकास होता है।
शिक्षा से संस्कार व सदाचार उन्नत होता है।।

किन्तु आज भारत में इससे विपरीत हो रहे हैं।
फैशन-व्यसन आलस्य प्रमाद भ्रष्टाचार सर्वत्र छा रहे हैं।। (1)

इसके अनेक कारणों को अन्यत्र मैंने वर्णन किया।
कतिपय कारण यहाँ पर कविता/(पद्य) रूप में वर्णन किया।।

शिक्षा का आज उद्देश्य अधिक संकीर्ण स्वार्थ हुआ।
डिग्री नौकरी स्टेटस सिम्बल आलस्य दिखावा हो गया।। (2)

सामाजिक प्रतिष्ठा विवाह भी शिक्षा का परिणाम मानते हैं।
शोध-बोध संस्कार सदाचार आध्यात्मिक परिणाम गायब हुये।।

अभिभावक व शिक्षक वर्ग समाज सरकार विद्यार्थी सब।
येन-केन प्रकार से क्षुद्र स्वार्थ हेतु पढ़ाई चाहते है तोता के सम।। (3)

संकीर्ण स्वार्थमय बीज ही जब वृक्ष बनकर फूल-फलेगा।
स्वार्थमय फल के बिना निस्वार्थ फल कैसे लगेगा।।

कुकृत्यों के निवारण हेतु उद्देश्य को महान् बनाओ सब।
जिससे महान् बनेगा देश 'कनक' आशीष/(विकास) पाओगे सब।। (4)

बावलवाड़ा 14.12.2012, प्रातः 7:08

भोले-भाले लोगों की विशेषतायें

(मेरे लिए प्रिय व्यक्ति)

(राग : हे गुरुवर धन्य..... सावन का महीना.....)

भोले-भाले लोग मुझे अच्छे लगते, सत्ता-सम्पत्ति से भले रहित होते।

ज्ञान-विज्ञान भले नहीं जानते, वाद-विवाद करना नहीं जानते।।
सहज-सरल वे जीवन जीते, कूट-कपट-दंभ से रहित होते।
धोखाधड़ी मिलावट नहीं करते, ईर्ष्या-द्वेष-घृणा से रहित होते।।
परनिन्दा चुगली वे नहीं करते, पर अपकारी काम नहीं करते।
परशोषण हिंसा से रहित होते, कलह विसंवाद नहीं करते।।
आडम्बर दिखावा नहीं करते, सादा-सीधा-मधुर सहित होते।
हित-मित-प्रिय वचन बोलते, दया क्षमा सेवा से सहित होते।।
संवेदनशील व प्रेमालु होते, छोटा-खोटा भाव से रहित होते।
उदार सहिष्णु विनम्र होते, संकीर्ण स्वार्थ से परे जो होते।।
बालक सम जो सहज/(सरल) होते, शिरीष कुसुम सम मृदु वे होते।
बसन्त बयार सम शीतल होते, वेतस वृक्ष सम विनम्र होते।।
सरल रेखा सम सीधे जो होते, गोदुग्ध सम मधुर वे होते।
मधुप सम गुणग्राही वे होते, आकाश सम वे निर्बाध होते।।
स्वभाव मादर्व वाले स्वर्ग में जाते, मायाचारी जन तो तिर्यंच होते।
सत्ता सम्पत्ति वाले नरक जाते, क्रोधी मानी जन भी नरक जाते।।
स्वभाव मार्दव वाले भोले जो होते, इह पर भव में सुखी भी होते।
अन्य लोक भले इन्हें तुच्छ मानते, 'कनकनन्दी' इन्हें अच्छा मानते।।

परसाद 15.2.2013, रात्रि 8.40

''अतिसर्वत्रवर्जयत्''

भारतीयों के अतिआचार/(अत्याचार) के कुफल

(राग : यमुना किनारे श्याम....., छोटी-छोटी गैया.....)

'अतिसर्वत्रवर्जयते' नीति कहती, 'समता' सफलता की गाथा बताती।
'अनेकान्त' से सर्वोदय ही होता, 'एकान्त' से विनाश ही संभव होता।।
'आध्यात्मिकता' से अनन्त विकास होता, भौतिकता का अतिकर विनाश देता।
सीमा रहित आकाश विस्तृत होता, 'तट' रहित नदी से विनाश होता।। (1)
अति खाना-पीना-सोना या जगना, अति बोलना चलना खेल-खेलना।
फैशन-व्यसन दंभ/(पाप) या श्रम करना, सत्ता सम्पत्ति प्रसिद्धि का मोह करना।।
इन्द्रियों के उपभोग व प्रकृति दोहन, यान-वाहन यंत्रों के अति गमन।
गर्मी-सर्दी-वर्षा का होना न होना, हानिकर होता है अति का होना।। (2)

भारत में विविध अति हो रहे है, जिसके कुपरिणाम भी भोग रहे है।
पढ़ाई ट्यूशन व परीक्षा के कारण, लोप हो रहे संस्कार व सदाचरण।।
सरल-सहज जीवन भी लोप हो रहा, तनाव (व) कुमरण भी बढ़ रहा।
खेल के दिवाना जब लोग हो गये, खिलाड़ी भी देश के भगवान् हो गये।। (3)
फैशन-व्यसन ग्लेमरेश छा गये, वाद-विवाद व भ्रष्टाचार छा गये।
जिससे खेल में भी पिछड़े हो गये, ओलंपिक में सबसे नीचे हो गये।।
अन्तर्राष्ट्रीय संघ से बहिष्कार हो गये, स्वदेश में भी शर्मसार हो रहे।
धन की अतिलालसा से भ्रष्ट हो रहे, मिलावट भ्रष्टाचार खूब कर रहे।। (4)
अन्याय अत्याचार चोरी हिंसा हो रहे, अपहरण ठगी व शोषण हो रहे।
हीरो हीरोईन के फेन/(भक्त) बन रहे, सिनेमा व टी.वी. में खूब देख रहे।।
फैशन-व्यसन भी अति कर रहे, भगवान् मानकर पूजे जा रहे।
आधुनिक बनने का ढोंग कर रहे, अकल बिना नकलची हो रहे।। (5)
पाश्चात्य अपसंस्कृति के चेले बन रहे, फैशन-व्यसनों से बड़े बन रहे।
अति गर्व से रावण का हुआ विनाश, अति-लोभ से कौरवों का हुआ विनाश।।
सम्यक् आहार विहार-विचार करो, समन्वय संतुलन सदा ही करो।
अति त्याग करो समता को स्वीकारों, कनक का आशीष विकास करो।। (6)

बावलवाड़ा 18.12.2012, रात्रि 11:46

"दुष्टता के कारण एवं कर्म"

(राग : शत्-शत् वंदन....., छोटी-छोटी गैया.....)
दूसरों की कमियों को दुष्ट जानते/(मानते, कहते)
अपनी कमियों को नहीं मानते/(जानते, कहते)।
आँख मुन्द कर बिल्ली दूध को पीती, अन्य से अदृश्य/(अज्ञात) मैं यह सोचती।।
मार पड़ने पर वह/(बिल्ली) वह समझ पाती,
तथाहि दुष्ट की दुर्दशा होती।
घड़ियाली आँसु सम दुष्ट की वृत्ति,
अन्य के कष्ट से होती है तृप्ति।। (1)
बँसी बजाता यथा नीरो सम्राट, रोम जलने पर होता संतुष्ट।
यथाहि रावण कंस व चगेंजखाँ, हिटलर मुसोलिन व नादिरशाह।।
मंथरा शकुनि व बहू तानाशाह, दुष्ट लोग होते है बहू भयावह।

जोंक के समान होते वे दुष्ट, दुर्गुणों को वे करते आकृष्ट।। (2)
बगुले के समान होते सफेद, अन्दर से काला बाहर सफेद।
दृष्टि दोष से दृश्य दिखते विकृत, तथा दुष्टों को दिखते गुण विकृत।।
स्व-दोष को दुष्ट नष्ट नहीं करते, गुणी-गुणों को करना चाहते।
दुष्ट में होते हैं बहु दुर्गुण, ईर्ष्या द्वेष मोह आदि कुगुण।। (3)
जिससे उनमें दुष्टता होती, दुष्टता पूर्वक प्रवृत्ति होती।
अशुभ लेश्या वाले होते कुजन, आर्त रौद्र में होते प्रवीण।।
संक्लेशित जीवन वे भोगते, दुःख भोगकर दुःख ही देते।
मानव रूप से (वे) होते दानव, दुष्टता त्याग से बनेंगे देव।। (4)
ईर्ष्या द्वेष मोह त्यागों मानव, साधना के द्वारा होना संभव।
इसी हेतु शिक्षा संस्कार धर्म, नीति-नियम व कानून कर्म/(शर्म)।।
सज्जन से साधु बनो महान्, साधना बल पर बनो भगवान्।
कनकनन्दी भी करे प्रयास, सज्जन बनने हेतु मेरा आशीष।। (5)

मौन की आत्मकथा

(मौनात् मुनि, मौनात् कलह नास्ति, मौनं सर्वार्थ साधनम्)

(राग : 1. भक्ति बेकरार है....., 2. छोटू मेरा....., 3. तुम दिल की.....)
मौन मेरा नाम है, शान्ति प्रदान काम है।
समता भाव से वचन निवृत्ति, मनन तथा चिन्तन है।।...ध्रुवपद।।
राग-द्वेषमय संकल्प-विकल्प त्याग से मेरा जन्म है।
तत्त्व चिन्तन व आत्म मनन से विकसित मेरा बदन है।।
हेय-उपादेय चिन्तन द्वारा त्याग व ग्रहण करता हूँ।
ज्ञान-ज्ञेय व परिज्ञान से, ज्ञान की वृद्धि करता हूँ।।...
वचन-निवृत्ति मन स्थिर व ज्ञान की वृद्धि होने से।
मनन चिन्तन समता द्वारा, शान्ति की प्राप्ति मुझसे।।
अप्रिय कठोर विकथा मिथ्या, कलहकारी वचन है।
मेरे कारण होते पलायन, नाश होता अतिवचन है।।...
इससे वाद-विवाद न होता, कलह-झगड़ा नहीं होता।
समय शक्ति की क्षति न होती, शब्द प्रदूषण नहीं होता।।

मानसिक स्थिरता की वृद्धि होती, विवेक-ज्योति प्रगट होती।
स्मरण शक्ति विकसित होती, समीक्षा-प्रज्ञा प्रखर होती।।...

शान्ति तृप्ति धृति बढ़ती, संवेदना अनुभूति बढ़ती।
तन-मन आत्मा की शक्ति बढ़ती, ध्यान अध्ययन की शक्ति बढ़ती।।

मेरे कारण भाषा समिति/(व) वचन गुप्ति की साधना होती।
सत्य व हित-मित प्रिय वचन की, सिद्धि भी मुझसे सरल होती।।...

''मौनात् मुनि'' ''मौनात् कलह नास्ति'' मेरे कारण प्रसिद्ध हुए।
''मौन सर्वार्थ साधन'' जैसे नियम भी मुझसे हुए।।

तीर्थंकर बुद्ध गणधर/(ऋषि) मुनि, मुझसे अधिक प्रेम करते।
मंत्र साधक वैज्ञानिक दार्शनिक लेखक विद्यार्थी/(भी) नेह करते।।...

'कनकनन्दी' तो बाल्यकाल से, घंटा दिन माह वर्ष मुझे पालते।
औसत दो-तीन घंटा छोड़कर अधिकांश समय मुझे धरते।।

पंच प्रकार स्वाध्याय छोड़कर, प्रायः दिनभर मौन रखते।
हर चतुर्दशी तथा हर रात्रि, अपवाद छोड़ मौन रखते।।...

स्नान भोजन पूजन भजन, मल मूत्र त्याग व मैथून में।
मेरी आराधना करना विधेय, ध्यान अध्ययन श्रवण में।।

अधिक सुनना कम बोलना, यह है परम विवेक जानो।
यातें विधि ने दिया है दो कान, जीभ तो एक ही मानो।।...

मेरी आत्मकथा 'कनकनन्दी' ने किया है सही वर्णन।
जो मानव मेरी आराधना करते, पाते है शान्ति ज्ञान मान।।

'कनकनन्दी' की लेखनी द्वारा मैं हुआ हूँ मुखरित।
जो मुझे धारण करे वह, होता है उपकृत।।...

(इस कविता संबंधी विशेष परिज्ञान के लिए कवि गुरुदेव द्वारा रचित कृति ''मौन रहो या सत्य कहो'' का अध्ययन करें।)

बालववाड़ा 6.12.2012, रात्रि 9:27

धूली की आत्मकथा

(राग : जीना यहाँ मरना यहाँ....., छोटू मेरा नाम रे.....)
धूली मेरा नाम है, सूक्ष्म मेरा तन है।

वातावरण में मेरा भी होता विशेष स्थान।।ध्रु.।।

मैं हूँ पृथ्वी के सूक्ष्म कण व्याप्त हूँ वातावरण में।
मेरे कारण भी जलवाष्प बादल बने आकाश में।।
मेरे कारण भी नीला रंग दिखाई देता है आकाश।
मेरे कारण की धूँधला दिखाई देता है आकाश।। (1)

मेरी अधिकता से वायुमण्डल हो जाता है दूषित।
उसमें श्वास लेने वाले होते हैं रोग से पीड़ित।।
मेरे दूषित देह में लाखों होते हैं रोगाणु।
मानव मुझे न दूषित करो यदि न चाहते हो रोगाणु।। (2)

दमा-श्वास-खाँसी-जुकाम एलर्जी रोग मुझसे।
यान वाहन यंत्रों द्वारा पंगा न लो मुझसे।।
महापुरुषों के चरणों में जब मैं शरण लेती हूँ।
उससे पावन मैं बनकर मानव के शीश चढ़ती हूँ।। (3)

गायें जब संध्या में आती (है) चरके गोचर भूमि से।
गोधूली-वेला उसे कहते नामकरण हुआ मुझसे।।
छोटी-खोटी गुणी-दोषी उपकारी हूँ अपकारी।
मेरा वर्णन करने वाली 'कनक' की लेखनी बलिहारी।। (4)

बावलवाड़ा 1.12.2012, रात्रि 7.43

''वन (जंगल) की आत्मकथा''

(राग : आत्म शक्ति से ओतप्रोत.....)

मैं हूँ जंगल/(वन) सबसे निराला, सबसे निराली मेरी शान।
कीट-पतंग से पशु-पक्षी व मानव जाति की मैं हूँ जान।।

मैं हूँ वन वनस्पतियों का निवास रूप मंगल स्थान।
मुझसे प्राप्त होते हैं फूल-फल, औषधि लकड़ी व ऑक्सीजन।। (1)

मुझसे वर्षा-वर्षा से अन्न जिससे मानव का बनता भोजन।
ऑक्सीजन भी मुझसे मिलती जिससे प्राणी जीते जीवन।।

मुझसे शब्द वायु प्रदूषण दूर होते मृदा अपर्दन/(क्षरण) भी कम होता।
नदियों के प्रवाह को काम मैं करता, बाढ़ के प्रकोप भी कम होता।। (2)

मुझसे गिरे पत्तियों से प्राकृतिक खाद भी खूब बनती।
मेरी भूमि भी उपजाऊ होती, नदी तट भूमि भी उपजाऊ होती।।
मैं तो पृथ्वी के फेफड़ों के सम हूँ, विषाक्त गैस को संतुलन करता।
कीट-पतंग व पशु-पक्षी मानवों के हेतु ऑक्सीजन का कोष मैं बनता।। (3)
विज्ञान के नये अनुसंधान द्वारा भी, खूब बढ़ रहा है मेरा महत्व।
मेरा एक पेड़ जीवन भर देता है, योगदान दो सो अस्सी करोड़ (280) रु. तक।।
मेरे एक पेड़ की एक पत्ति ही, एक व्यक्ति हेतु देती ऑक्सीजन।
चार दिन तक श्वास ग्रहण योग्य, एक पत्ता देता ऑक्सीजन।। (4)
तथापि मेरी निर्मम रूप से, हत्या कर रहा है मानव कृतघ्न।
उपभोग हेतु दोहन के आगे, कर रहा है घोर शोषण।।
फैक्ट्री-रोड़-दुकान-मकान रेल पटरी हेतु करे मेरा हनन।
जिस पाप से (वह) भोग रहा है, ग्लोबल वार्मिंग व ग्लेशियर गलन।। (5)
अतिवृष्टि व अनावृष्टि झेलता, तथाहि बाढ़ व महातूफान।
शारीरिक मानसिक रोगों को भोगता, अन्नाभाव से भी करता मरण।।
भारत में ही पहले कुल क्षेत्रफल के, चालीस प्रतिशत थे मेरे तन।
अभी तो प्रायः बीस प्रतिशत ही रहा आधा काट दिया मेरा बदन।। (6)
एक मानव की ऑक्सीजन हेतु, सोलह पेड़ की होती आवश्यकता।
भारत में अभी चालीस लोगों की, एक पेड़ में होती निर्भरता।।
मुझे बचाओ तो तुम बचोगे, जीओ और जीने दो हे मानव!
इसी हेतु ही 'कनकनन्दी' मेरी, आत्मकथा लिखी मानो हे मानव!।। (7)

''प्राचीन या अद्यतनः जो श्रेष्ठ है वह ग्रहणीय''

(प्राचीन में भी कुछ अच्छे-बुरे थे अभी भी कुछ अच्छे-बुरे हैं)

(राग : छोटी-छोटी गैया.....)
प्राचीन मात्र से ही न होता है श्रेष्ठ/(कनिष्ठ/निकृष्ट)।
आधुनिक मात्र से ही न होता निकृष्ट/(श्रेष्ठ, कनिष्ठ)।
जो सच्चा-अच्छा वह ग्रहण योग्य,
किसी काल के भी रोग न ग्रहण योग्य/(हर काल की भी शान्ति ग्रहण योग्य)।।ध्रु.।।

सुषमादि काल भोग प्रधान होते, जीविका निर्वाह हेतु श्रम न होते।
प्राकृतिक प्रकोप व रोग/(शोक) न होते, मोक्षमार्ग व मोक्ष लाभ न होते।।
चतुर्थ काल तो कर्म प्रधान होता, मोक्ष मार्ग व मोक्ष लाभ भी होते।
महान् पाप भी होते उस काल में, सातों ही नरक जाते उस काल में।। (1)

पंचमकाल आया वीर निर्वाण बाद, मोक्ष बंद भी अनुबद्ध केवली के बाद।
उच्चतम स्वर्ग भी कोई नहीं जाता, सप्तम नरक भी कोई नहीं जाता
/(तीसरे नर्क से भी नीचे नहीं जाता)।।
चतुर्थकाल सम धर्म नहीं होता, उस काल सम पाप भी न होता।
तीर्थंकर गणधरादि भी न महान् होते, रावण कंस सम पापी भी न होते।। (2)

दास प्रथा अभी कानूनतः बंद, बंधुआ मजदूर बाल-विवाह बंद।
बहु विवाह-बलि प्रथा भी अभी कम, महामारी दुष्काल युद्ध भी कम।।
पहले से अभी है प्रदूषण भारी, जिससे उत्पन्न भी समस्या भारी।
आतंकवाद व भ्रष्टाचार भी बढ़े, मिलावट फैशन-व्यसन भी बढ़े।। (3)

मोटापा तनाव मधुमेह भी बढ़े, रक्तचाप हृदयघात भी बढ़े।
आत्महत्या व भ्रूण/(कन्या) हत्या भी बढ़ी, भौतिकवाद की समस्यायें बढ़ी।।
संयुक्त परिवार सम पृथिवी बनी, संचार क्रान्ति भी निमित्त् बनी।
परिवार समाज भी बिखर गये, सगा सम्बन्धी मित्र (भी) दूर हो गये।। (4)

अद्यतन युग में कुछ क्रांति हो रही, पाश्चात्य देशों से शुरु हो रही।
वैज्ञानिक शोधों से यह हो रही, आध्यात्मिकता की उदय हो रही।।
पर्यावरण सुरक्षा के काम हो रहे, दया-दान-सेवा के भाव हो रहे।
वैश्विक शान्ति हेतु आगे आ रहे, नये-नये शोध-बोध काम हो रहे।। (5)

प्रकृति की ओर पुनः आ रहे, उदार भाव से आगे आ रहे।
संकीर्ण भेद-भाव पीछे छोड़ रहे, वैश्विक कुटुम्ब के भाव आ रहे।।
भारतीय संस्कृति को मान दे रहे, शाकाहार ज्ञान-ध्यान ले रहे।
हमें बढ़ना हैं उन्हें बढ़ाना है, 'कनक' की यह सदा भावना है।। (7)

बावलवाड़ा 8.12.2012, रात्रि 11:34

(यह कविता क्षु. सुवीक्षमती माताजी की भावना से बनी।)

''हँसी की आत्मकथा''

(हँसी के कर्म सैद्धांतिक एवं वैज्ञानिक वर्णन)

(स्वस्थ हँसी से होते हैं तन-मन स्वस्थ)

(राग : आत्म शक्ति से ओतप्रोत.....)

मैं हूँ हँसी सबसे निराली, सबसे निराला मेरा काम।
मानव जाति की मैं पहचान, विभिन्न भाव प्रगट मेरा काम।।
हास्य व रति नोकषाय से, होता मेरा जन्म-स्थान।
प्रसन्नता व भाव प्रगटीकरण, होता मेरा प्रमुख काम।। (1)

हास्य व रतिकर्म सहित, जीवों में मेरा होता निवास।
अतएव मेरा अस्तित्व है, अनादि काल से अनन्त तक।।
विज्ञान अनुसार मानव में ही, होता मेरा विशेष निवास।
चालीस लाख वर्ष पूर्व जन्मी, जब मानव किया चलना प्रयास।। (2)

दो पैर में जब चलना सीखा, लड़खड़ाया और नीचे गिरा।
इसे देखकर ही उनके साथी, हँसने का शुरुआत किया।।
चलने के प्रयास में जब कुछ कमियाँ भी रह जाती।
उसे देखकर गुदगुदी होती, जिससे हँसी फूट पड़ती।। (3)

जो विषय मजेदार होता, हास्य रति से भी युक्त होता।
मन में प्रसन्नता उत्पन्न होती, खिलखिलाहट प्रगट होता।।
बीस लाख वर्ष पश्चात्, भाषा का विकास मानव ने किया।
शब्द व हास्यों के तरीका जोड़कर, चुटकले मजाक उड़ाया गया।। (4)

प्रसन्नता युक्त स्वस्थ हँसी से, तन-मन भी हो जाते हैं स्वस्थ।
अन्य में भी मेरा संचार होता वे भी होते तन-मन से स्वस्थ।।
मेरे कारण पेट में स्थित, डायफ्राम में होता कम्पन्न।
जिससे पेट फेफड़े यकृत का, हो जाता है अच्छा व्यायाम।। (5)

ऑक्सीजन का ज्यादा संचार होता, दूषित वायु का होता निर्गमन।
रक्त संचार भी तीव्र होता, पाचन तंत्र करता अधिक काम।।
पूर्ण शरीर क्रियाशील होता एंड्रोफाइन ग्रंथि से बने हारमोन।
जिससे तन-मन स्वस्थ/(सबल) होते, अनेक रोग होते नियंत्रण।। (6)

मुझसे तनाव दूर होता, जिससे मानसिक रोग होता नियंत्रण।

रक्तचाप शूगर माइग्रेन, हिस्टीरिया डिप्रेशन व पागलपन।।
मेरे प्रभाव से दूर हो जाते, मेरे अभाव से करे आक्रमण।
प्रसन्न मन से जो खाना खाता, उसे लगता है अधिक स्वाद।। (7)
पाचन भी सही होता, तन-मन को मिलता अधिक दम/(रस, रक्त)।
प्रसन्नचित्त व बुद्धिमान व्यक्ति को, मैं करती हूँ अधिक चाह।।
भोला-भाला सहज संतोषी को, मेरा मिलता है अधिक नेह।
बच्चों को मैं अधिक चाहती हूँ, उनके लिये मैं प्रिय सहेली।। (8)
हास्य विनोद हँसी मजाक, मुस्कुराहट/(स्मित) चहचहाना प्यारी।
मेरा विकृत रूप भी होता, अट्टहास्य व्यंग हँसी उड़ाना।।
रावण कंस द्रौपदी सम, स्व-पर (की) मैत्री शान्ति जलाना।
डालफिन चिम्पांजी आदि पशु भी, पाते मेरा थोड़ा आशीष।। (9)
मेरा वरदान जिसको मिलता, उसकी बत्तीसी खिल जाती है।
रोम-रोम खिल जाते हैं, आँख नाक से गंगा यमुना बहती है।।
पेट में बल पड़ जाता है, अंग-अंग नाचे गाते हैं।
वातावरण महक जाता, जन-जन हर्षित हो जाते है।। (10)
वातावरण महक जाता, जन-जन हर्षित हो जाते हैं
क्रूर कठोर धूर्त पापी, नहीं पाते हैं मेरा शुभ आशीष।
धनी-मानी-ज्ञानी या चक्रवर्ती (भी) मेरे बिना होते हैं कंगाल।।
मेरे सहित आबाल वृद्ध, गरीब भी होते हैं मालामाल।
इसलिये मानव मुझे तू पाओ, छोड़कर मान (व) दुराचार।। (11)
आधुनिक सुख-सुविधा में भी, मुझे नहीं पाते हैं पापी नर।
इसलिये तनाव कलह बढ़ रहे, विभिन्न रोग व आत्महनन।।
अतएव लाफिंग थैरेपी द्वारा, मेरा कर रहे हैं पुनः आह्वान।
'कनकनन्दी' द्वारा मेरा वर्णन, किया गया मानव के हितकर।। (12)
भ्रूण अवस्था से ही मानव, मुझे सहज भी पाता है।
सुख में मेरे द्वारा मुझे, और भी बढ़ाता जाता है।।
दुःख में मेरे द्वारा दुःखों को, भी कम करता जाता है।
कनकनन्दी जी को मेरा वरदान, मिला हुआ है अपरम्पार।। (13)

बावलवाड़ा 13.12.2012, रात्रि 3:40 से 6:36 तक

(यह कविता श्रमणी सुविधेयमती की भावना के कारण बनी)

''क्रम विकास से शुद्धात्मा बनों''

(राग : ज्योत से ज्योत....., छोटी-छोटी गैया.....)

क्रम विकास मार्ग में आगे ही बढ़ो, बीज से वृक्ष व फूलों से फलों।
अक्षर शब्द ग्रंथ भाव को पढ़ो, भौतिक से नैतिक आध्यात्म चलो।।ध्रु.।।
प्रतीक से प्रतीति निश्चय करो, शरीर से मन व आत्मा में चलो।
चित्र से नक्षा व यथार्थ जानो, बुद्धि से परे भावना आध्यात्म जानो।।
जीवन भर अक्षर शब्द न पढ़ो/(रटों), बीज प्राप्त करके ही न सन्तोषी बनो।। (1)
कस्तुरी मृग सम बाह्य में न भटक, मृगमरीचिका के पीछे न भटक।
तन-मन इन्द्रियों में ही न अटक, सत्ता सम्पत्ति कीर्ति में न अटक।।
राग-द्वेष मोह नाहीं तेरा स्वभाव, शरीर-मन-इन्द्रिय तेरा विभाव।
जन्म-मरण रोगादि से परे स्वरूप, सच्चिदानन्दमय शुद्ध स्वभाव।। (2)
अन्य के पीछे स्वयं को भूला, संसार की भीड़ में भटका हुआ (है)।
संकीर्ण मत-पंथ में रत हुआ (है), फैशन-व्यसनों में मस्त हुआ (है)।।
ईर्ष्या-तृष्णा-मद को घटाता चलो, सत्य-साम्य-शान्ति को बढ़ाता चलो।
पाप त्यागों पुण्य करो शुद्ध को वरो, 'कनक' क्रम विकास से शुद्धात्मा बनो।। (3)

छाणी 10.1.2013, प्रातः 8:40

''हिंसा एवं अहिंसा का विश्वरूप''

(राग : बिन गुरु ज्ञान नहीं है....., नरेन्द्र छन्द.....)

हिंसा अहिंसा के स्वरूप को जानो, भाव-द्रव्यरूप दोनों पहचानो।
भावमय दोनों प्रमुख जानो, द्रव्यरूप दोनों भजनीय जानो।।
आत्म परिणाम है प्रमुख जानो, अशुद्ध शुद्ध परिणाम मानो।
भावहिंसा होती (है) अशुद्ध भाव, अहिंसा होती है शुद्ध स्वभाव।।
आत्म परिणाम हिंसन हिंसा, कषाय भाव ही निश्चय हिंसा।
प्रमत्त भाव होना ही हिंसा, क्रोध-मान-माया-लोभ ही हिंसा।।
भावहिंसा के सद्भाव होने से, हिंसा का पाप लगता जीव में।
द्रव्यहिंसा को अन्यथा नहीं, हिंसा का भागी बनता वही।।
भावहिंसा सह द्रव्यहिंसा से, भाव-द्रव्यप्राण हनन होने से।

हिंसा का दोष लगता जीव को, पापबंध हो जाता जीव को।।
कर्मबंध होता है भाव से, पुण्य पाप भी होता भाव से।
संवर निर्जरा होता भाव से, ध्यान व मोक्ष होता भाव से।।
भाव प्रधान है धर्म होता, भाव सहयोगी निमित्त होता।
उपादान अनुसार कार्य होता, निमित्त सहयोगी उसमें होता।।
इसके दृष्टान्त कृषक-धीवर, ड्राईवर यात्री डाकू-डॉक्टर।
राम-रावण व कौरव-पाण्डव, आक्रमणकर्त्ता व देश रक्षक।।
महामत्स्य व तन्दुलमत्स्य, आचार्यपरमेष्ठी श्रेणी आरोहक।
द्रव्यहिंसा बिन हिंसक कोई, द्रव्यहिंसा सह हिंसक न कोई।।
द्रव्यहिंसा ही यदि होती हिंसा, संसार में पालन न होती अहिंसा।
आहार विहार निहार श्वास से, द्रव्यहिंसा होती अहिंसक मुनि/(श्रमण जन) से।।
संघानुशासन करते आचार्य, दोष निवारण हेतु मुनिवर।
श्रेणी आरोहण में निगोद मरते, तथापि हिंसा के भागी न बनते।।
भाव अहिंसक गृही जो/(जो जीव) होते, उनसे व्यर्थ/(अधिक) जीव न मरते।
पूर्ण अहिंसक मुनि जो होते, नवकोटी से जीव न मारते।।
अहिंसा अणुव्रती जो जन होते, पंचाणुव्रत भी पालन करते।
अहिंसा सत्य शील व अचौर्य, पालन करते सहित अपरिग्रह।।
असत्य आदि से हिंसा भी होती, कषाय रूप ही परिणति होती।
सप्तव्यसन भी हिंसा ही जाने, मिलावट शोषण भ्रष्टाचार सम्पूर्ण।।
अहिंसा है शुद्ध आत्म स्वरूप, हिंसा इसीसे विपरीत भाव।
पूर्ण अहिंसा से सम्पूर्ण मोक्ष, 'कनकनन्दी' का परम लक्ष्य।।

परसाद 21.2.2013, प्रातः 6:22

(यह कविता पुरुषार्थ सिद्धयुपाय से प्रभावित)

कनकनन्दी गुरुदेव का व्यक्तित्व एवं साधना

(मधुबन के मंदिरों में)
अरावली के वन प्रदेश में, योगीश बस रहे हैं।
विज्ञान (के) समन्वय से, निज धर्म पा रहे हैं।।ध्रु.।।
अध्यात्म का ये सोना, अनेकान्त का है गहना

स्याद्वाद से ही कहना, आगम का बहता झरना
सुनियोजित लापरवाही से, निस्वार्थी बन रहे हैं।। (1)
आत्मिक गुणोपलब्धि, ना उनका सदुपयोग
दुरूपयोग से तो दूर, उपबृंहण (समृद्धि) कर रहे हैं
वात्सल्यमयी गुरुवर, निज प्रभावना/(प्रकाशन) कर रहे हैं।। (2)
शुभ भाव के ही भोगी, निष्काम कर्म योगी
संसार से विरक्ति, पाने अनन्त शक्ति/(शान्ति)
भावों की विशुद्धि से प्रतिक्षण मोक्ष चाहे।। (3)
समता-दया-अहिंसा, जग मान्य धर्म ऐसा
गुरुवाणी सुन रहे है, सिद्धान्त मर्म खास
हिंसा में ही गर्भित है, पाँचों पाप हमने जाना।। (4)
सर्वोदय का है नारा, अन्तोदय हो भाव न्यारा
करूणा का स्रोत मनमें, वैश्विक हो धर्म प्यारा
अक्षमा कभी न मनमें, क्षमा भाव से है पूर्ण।। (5)
गुरुदेव प्रायः रहते, नगर-नरक से दूर
एकान्त-शान्ति-प्रिय कोलाहल से दूर
जंगलवाले बाबा का प्रायोगिक है ये रूप।। (6) **आर्यिका सुवत्सलमती**

''निराले गुरुदेव''

(तर्ज : आज मेरे यार की शादी है.....)
गुरु की हर बात निराली है हाँऽऽऽऽ बात निराली है
गुरु की हर शान निराली है
लगता है जैसे यहाँ, हर रोज दीवाली है
गुरु की हर बात निराली है.....।।टेक।।
''कनकनन्दी जी'' गुरुवर...अहाऽऽऽऽ
वो देखो भोली सूरत अहाऽऽऽऽ
ज्ञानी ध्यानी ऋषिवर की,
देखो मनभावन मूरत
अपने में खोये रहते, जय होऽऽऽऽ

जैन-विज्ञानी गुरुवर जय होऽऽऽऽ
होऽऽऽऽ विश्व में इस अनोखे ऋषि की,
अदा निराली है।।गुरु की हर.....।।1।।
विश्व-कल्याणी गुरुवर, अहाऽऽऽऽ
सर्वोदय-भावी ऋषिवर/(यतिवर) जय होऽऽऽऽ
ज्ञानी विज्ञानी ऐसे, परम उपकारी मुनिवर
सर्वजीव हितकारी अहाऽऽऽऽ
सर्वजीव सुखकारी जय होऽऽऽऽ
हाँऽऽऽऽ आ जावो सब गुरु-चरणों में,
अजय तो बलि-बलिहारी है
गुरु की हर बात निराली है
हाँऽऽऽऽ शान निराली है,
गुरु की हर अदा निराली है।।2।।

कृति : डॉ. अजय जैन, नागपुर
संघस्थ : आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव

''श्रमणाचार्य श्री कनकनन्दी जी भगवंत''

''अनमोल रतन-धन-खान''

जसकार 'अजय' संघस्थश्री

पायोजी मैंने 'कनक' रतन धन पायो
पायोजी मैंने गुरुवर रतन धन पायो
पायोजी मैंने भगवन् रतन धन पायो।।टेक।।
खर्च न फूटे, चोर न लूटे, दिन-दिन बढ़त सवायो
पायोजी मैंने 'कनक' रतन धन पायो
पायोजी मैंने..... सुख साक्षात् ही पायो.....।।1।।
सत् की नाव, खेवटिया सद्गुरु, भवसागर तर आयो
पायोजी मैंने ऐसो खेवटिया पायो
पायोजी मैंने..... श्री गुरुवर धन पायो.....।।2।।

तप की दृढ़ता, त्याग की मूरत, समता रूप है भायो
पायोजी मैंने निस्पृह रूप भी पायो
पायोजी मैंने.....'जगद्गुरु' ऐसो पायो.....।।3।।
स्वाध्याय है जिनके रग-रग2, स्याद्वाद ढंग पायो
पायोजी मैंने सूरीश्वर जी को पायो
पायोजी मैंने साक्षात् भगवन् पायो.....।।4।।
सारे जगत में डंका बाजे, सत्य-धर्म खूब फैलायो
सहज प्रोत्साहित करते भलमन,
मैं तो सत्य सुखामृत पायो.....।।5।।
अजय धूल के फल श्री कनकनन्दी
मेरी तो हर श्वाँस श्री कनकनन्दी
हरख-हरख जस गायो, गायोजी मैंने हरख.....
पायोजी मैंने आध्यात्मिक रस पायो.....।।6।।

अनुमोदना/प्रोत्साहन गीत

वैश्विक गुरु श्री कनकनन्दी जी के स्वप्रेरक सहयोग-सेवाकर्त्ता शिष्य-वृन्द

अनुमोदक सृजन-मुनि सुविज्ञसागर

चाल : ज्योति कलश छलके.....
पद्म चरण गुरु के...2
जिनकी सेवा-सुश्रुषा में...शिष्य लगे मन से...व्यापक भाव से...(ध्रुवपद)...
सहयोग सेवा श्री गुरुवर की...कर रहे हैं स्व-प्रेरणा से
स्व-शुभ भाव से...तन-मन-धन से... ...पद्मचरण...
कोई साहित्य के प्रकाशन कर्त्ता...कोई कक्ष स्थापन कर्त्ता...
विश्वविद्यालयों में...देश-विदेशों के... ...पद्मचरण...
साहित्य लेखन वाचन शोधन...लेखन सामग्री उपकरण...
वसतिका दान युत...औषधि-शास्त्र से... ...पद्मचरण...
विश्व धर्म संसद में जाकर...प्रतिनिधि गुरुजी के बनकर...

वैश्विक दृष्टि से...ज्ञान प्रसार करें... ...पद्मचरण...

यह सब अतिशय श्री गुरुवर का...निस्पृही अयाचक मन का...

आध्यात्मिक भाव में/(के) सहज-सरल से... ...पद्मचरण...

जिनकी समता-क्षमता-प्रज्ञा...से लाभान्वित मुनि-विज्ञानी...

'सुविज्ञ' भाव से...द्वय कर जोड़ खड़े... ...पद्मचरण...

परसाद 22.2.2013, रात्रि 11:30

आ. श्री के दीक्षा दिवस 5 फरवरी के उपलक्ष्य में

''गुरु वन्दन/स्तूवन''

(आचार्य कनकनन्दी जी के गुणों का वर्णन)

-क्षुल्लिका सुवीक्षमती

(राग : मीठो-मीठो बोल.....)

गुण गाओ सब गुण गाओ...कनकनन्दी जी के गुण गाओ।

दृढ़ संकल्पी करूणानिधान...प्रबल प्रखर व्यक्तित्ववान।।ध्रु.।।

युवावय में दीक्षा है धारी...भोग विषय से सर्वथा विरागी।

सत्य-तथ्य में जिज्ञासु भारी...स्वयं को पाने की मन में है ठानी।।

समय शक्ति व बुद्धि का अपव्यय...तुम्हें न एक पल भी भाता है।

बाल अवस्था से ही यतिवर का...धैर्य व साहस से नाता है।।

श्रद्धा सहित...भक्ति सहित...मैं वन्दन करूँ तव पद युगल।

गुरुवर मेटो मिथ्या भरम...गुण गाओ...।। (1)

अपने पराये का भेद न धरे...निष्पक्ष भाव से सत्य ही वरे।

सर्वजीव सुख-शांति को पाये...अन्त्योदय की भावना भी भाये।।

दुर्गुणों से दूर ही रहते...प्रलोभनों से मोहित न होते।

विघ्न बाधाओं में अविचल रहते...आत्मबल युत आगे ही बढ़ते।।

कीर्तन करूँ...स्तुति करूँ...मैं वन्दन करूँ...।। (2)

स्व-मूल्यांकन स्वयं ही करते...अन्य की उपेक्षा प्रतीक्षा न करते।

न्यायशील अनुशासन प्रिय गुरुवर...भाव विशुद्धि को केन्द्र में रखते।।

भौतिकता की चकाचौंध परे...संकीर्ण-स्वार्थ अनुदारता से परे।
स्वहित सह परहित में भी रत...अमिट गुणों की वांछा ही करें।।
पूजन करूँ...अर्चन करूँ...मैं वन्दन करूँ...।। (3)

प्रोत्साहन की जादुई क्षमता से...अयोग्य में योग्यता जगाते हैं।
शरणागत वत्सल गुण युत सूरीवर...भटके हुये को राह सुझाते हैं।।
कलिकाल में भी समता का है साथ...मानव रूप में महामानव है आप।
आपकी निश्चल छवि को लखकर ही...मिट जाता है सकल दुःख संताप।।
आदर सहित...सम्मान सह...मैं वन्दन करूँ...।। (4)

अनुभव ज्ञान में आपका न सानी...चिंतन युत स्व आत्मा के ध्यानी।
अद्भुत वैचारिक क्षमता धारी...गूढ़ रहस्यों के भी विज्ञानी।।
विस्पृह मौनी अयाचक वृत्ति...सहज सरल आचार में प्रवृत्ति।
परम आदर्श तुम ही हो मेरे...तव सम उत्कृष्ट भावना हो मेरी।।
आनन्द से...शुभ भाव से...मैं वन्दन करूँ...।। (5) खेरवाड़ा 4.2.2013

आरती श्री कनकनन्दी जी

-मुनि सुविज्ञसागर

चाल : 1. इह विधि मंगल....., 2. आरती कीजै हनुमान लला.....
आरती करूँ गुरुदेव चरण की...सर्वजीव हितकारी शरण की
कनकनन्दी जी वैश्विक सूरी...ज्ञान-विज्ञान दिवाकर सूरी...आरती...
तव उपकारी विमल सिन्धु जी...मार्गदर्शक अनुमोदक की...
विजयमती जी शिक्षादात्री...जिनकी शिक्षा बनी हितकारी...
युवावय में दीक्षा धारी...कुन्थु गुरु की कृपा निराली...
शिक्षा-दीक्षा में भरतसागर जी...विद्यानन्द जी सूरी सहायी...
उपाध्याय पदवी हासन नगरी...कुन्थुसागर वरद हस्ती...
आचार्य पदवी संस्कार दायी...अभिनन्दन सूरी उपकारी...
सिद्धान्त चक्री पदवी पाई...देशभूषण गुरु अतिशयकारी...
शताधिक साधु-साध्वी विज्ञानी...आपसे शिक्षित बने हैं ज्ञानी...

विश्वधर्म प्रभाकर बनकर...जिन धर्म की ध्वज फहराई...
धर्म-दर्शनविज्ञान समन्वित...'सुविज्ञ' चाहे प्रभावना भारी...

खेरवाड़ा 3.2.2013, प्रातः प्रायः 7:30

आरती आचार्य श्री कनकनन्दी जी

आध्यात्मिक यात्री श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की आरती

प्रस्तुति-मुनिश्री सुविज्ञसागर

चाल : आरती करो शंकर की करो.....नटवर की बोल शंकर की.....
आरती करो आध्यात्मिक गुरुश्री कनकनन्दी ऋषिवर कीऽऽ
आरती करो गुरुवर की...ऽऽ...
आध्यात्मिक क्रान्ति करने वाले, विश्व शान्ति के है रखवाले
सत्य साम्य सुखामृत का नित, प्राशन करते सन्त निराले
हो वैज्ञानिक उदारभावी, सन्त सूरीश्वर जी...आरती करो गुरुवर...
मार्ग निर्देशक विमलसागर जी, विजया माताजी समाधान कर्ती
आगम शिक्षा प्राप्त करके, लक्ष्य बनाया साधुवर्ती/(व्रती)
कुन्थुसागर जी से दीक्षा प्राप्त कर, आप बने मुनिवर जी...आरती करो...
अनुमोदन शिक्षण देने वाले, भरत विद्यानन्द गुरु निराले
श्रवणबेलगुल महाभिषेक (1981) में, प्रायः (200) द्विशत साधु-साध्वी...
लाखों श्रद्धालु संगम मध्ये, श्रमण बने गुरुवर जी...आरती करो गुरुवर...
अनेक पदवियाँ पाने वाले, सन्त श्रेष्ठ हैं आप निराले
हासन नगरी (1982) में कुन्थु सिन्धु से, उपाध्याय पदवी आपने पाये
कुन्थु प्रदत्त आचार्य पद (1996) को, दिये अभिनन्दन जी...आरती करो...
शताधिक साधु वन्द (प्रायः 200) वैज्ञानिक, आपसे हुए शिक्षित-दीक्षित
देशभूषण जी आपको दिए, सिद्धान्त चक्री (1985) पदवी निराली
विश्व धर्म प्रभाकर (1991) बनकर, ज्ञान-विज्ञान प्रदर्शी (1991)...आरती करो...

खेरवाड़ा 2.2.2013, मध्याह्न 3:30

''गुरु गुणगान''

(आचार्य कनकनन्दी जी के उद्देश्य एवं साधना)

-आर्यिका सुविधेयमती

(राग : सुन साहिबा सुन.....)

गाये मेरा मन, गुरु के भजन

हो...अविचल अविकारी, गुरु भगवन्।।ध्रु.।।

भौतिकता की चमक, इनको लुभाती नहीं।

धन-मान की चाह भी, इनको सताती नहीं।।

ख्याति-पूजा-लाभ से, दूर ही रहते हैं।

वन और भवन में, समता में रहते है।।

हो...सतत करे ये चिन्तन, ध्यान और मनन...।। (1)

गुण-दोष को जानते...करते समीक्षा सही।

फिर भी न कहते कभी...बस लेते हैं शिक्षा नई/(सही)।।

राग-द्वेष मोह भी...इनसे तो हारा है।

हम जैसे बालकों को...इन्हीं का सहारा है।।

हो...इन जैसा बनने की, लागी है लगन...।। (2)

रहस्य जो इनसे मिले...वो मिल पायेंगे ना कहीं।

प्राची में स्थित सूर्यवत्...अनुभव से प्रकाशित मही।।

अध्यापन पद्धति...जग से निराली है।

आध्यात्मिक चिन्तन से...मोद देने वाली है।।

हो...''कनक'' से शिक्षा नित...गहे मेरा मन...।। (3)

सुविज्ञता के धनी...आध्यात्मनन्दी गुरु।

वात्सल्य भाव भरा...हैं गुण की सुनिधि गुरु।।

सुनीति से जिनकी...सुख सब पाये हैं।

सुविधेय भाव...सुवीक्ष ने जगाये हैं।।

हो...सोहन भी नित चाहे...'कनक' चरण...।। (4)

खेरवाड़ा 27.1.2013, प्रातः 8:30

मेरे अनुभव की पद्धति तथा कार्य पद्धति

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : क्यूँ कर भक्ति करूँ....., आत्म शक्ति....., शायद मेरी....., इक परदेशी मेरा दिल.....)

अनुभव मुझे श्रेष्ठ-ज्येष्ठ लगता है, अनुभव मुझे सर्व प्रिय लगता है।
अनुभव मुझे बहुमूल्य लगता है, अनुभव मुझे अनमोल लगता है।।
अनुभव हेतु सदा यत्न करता हूँ, अनुभव युक्त सर्व यत्न करता हूँ।
हर यत्न से भी अनुभव लेता हूँ, इसे तो बढ़ाता किन्तु नहीं त्यागता हूँ।।
अनुभव प्राप्ति हेतु यत्न करता हूँ, सनम्र सत्यग्राही से इसे पाता हूँ।
निष्पक्ष होकर मैं इसे पाता हूँ, प्रज्ञा व श्रद्धा सहित इसे पाता हूँ।।
अध्ययन शोध बोधमय होता है, चिन्तन व मनन युक्त होता है।
समीक्षा समन्वय से युक्त होता है, बहुविध विषयों का यह होता है।।
धर्म दर्शन विज्ञानमय होता है, गणित व आध्यात्ममय होता है।
नय प्रमाण निक्षेप युक्त होता है, सूक्ष्म व्यापक अनेकान्तमय होता है।।
प्रत्यक्ष अनुमान-तर्क युक्त होता है, दबाव प्रलोभन से रिक्त होता है।
राग-द्वेष मोह से परे होता है, उदार व सहिष्णु युक्त होता है।।
कार्य-कारण सम्बन्ध युक्त होता है, नकलची अन्ध श्रद्धा रिक्त होता है।
सरल-सहज-साम्य युक्त होता है, संशय-विभ्रम से रिक्त होता है।।
अपेक्षा-उपेक्षा से भी रिक्त होता है, अन्य की प्रतीक्षा से मुक्त होता है।
ख्याति पूजा लाभ से शून्य होता है, सत्य-तथ्य-विवेक से पूर्ण होता है।।
ऐसा ही हर विषय में मेरा होता है, व्यक्ति समाज राष्ट्र या विश्व होता है।
गुणी दुर्गुणी पापी या संत होता है, पशु-पक्षी कृमि या वृक्ष होता है।।
सुख-दुःख हानि-लाभ सभी होते हैं, निन्दा-प्रशंसा अपेक्षा-उपेक्षा होती है।
सुघटना-दुर्घटना आदि होती है, समता-विषमता आदि होती है।।
स्वप्न-शकुन से भी अनुभव लेता हूँ, सामुद्रिक शास्त्र से भी अनुभव लेता हूँ।
छाया पुरुष का सहयोग लेता हूँ, अंग स्फुरण से भी लाभ लेता हूँ।।
भावात्मक शकुन को मुख्यता देता हूँ, आध्यात्मिक चिन्तन को प्रमुखता देता हूँ।
क्रिया-प्रतिक्रिया से शिक्षा लेता हूँ, परिणाम से परिणाम की शिक्षा लेता हूँ।।

कर्म सिद्धान्त सहित शिक्षा लेता हूँ, प्राकृतिक नियमों से शिक्षा लेता हूँ।

अनुभव से अनुभव अन्य भी होते, अनेक अनुभव भी सह जुड़ते।।

अनुभव रूपी चक्र विशाल होता, अविरल गति/(अविराम गति) से आगे बढ़ता।

हर विषय को मैं स्वयं में घटाता हूँ, स्वयं को ही प्रयोगशाला बनाता हूँ।।

एकान्त समता मौन में रत रहता हूँ, स्वयं के अनुभव से अन्य को पढ़ाता हूँ।

अनुभव सहित जो मैं काम करता, उसमें उत्तीर्ण मैं अवश्य होता।।

सरल-सहज से भी काम हो जाता, समय-साधन भी कम लगता।

आनन्द उत्साह का भी संचार होता, महान् काम में भी भय न होता।।

विश्व मानव भी स्वानुभव को पाये, इसी हेतु 'कनक' भी भावना भाये।

सनम्र सत्यग्राही पावन बनो, स्व-पर उपकारी मानव बनो।।

परसाद, दि. 7.3.2013, रात्रि 12.00 बजे

मेरे अनुभव से मैंने जो अनुभव किया

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : शत-शत वन्दन....., रघुपति राघव.....)

अनुभव से अनुभव होता है, अनुभव ही सच्चा ज्ञान होता है।

अनुभव से ज्ञान पक्का होता है, अनुभव से ज्ञान उच्च होता है।।

अनुभव बिना ज्ञान शिक्षा न देता, अनुभव बिना ज्ञान दीक्षा न देता।

अनुभव बिना ज्ञान दिशा न देता, अनुभव बिना ज्ञान सुख/(दशा) न देता।।

अनुभव बिना ज्ञान धैर्य न देता, अनुभव बिना ज्ञान गर्व को देता।

अनुभव बिना ज्ञान भक्ति न देता, अनुभव बिना ज्ञान शक्ति न देता।।

अनुभव बिना ज्ञान शम न देता, अनुभव बिना ज्ञान दम न देता।

अनुभव बिना ज्ञान शुचि न देता, अनुभव बिना ज्ञान शान्ति न देता।।

विवेक अनुभव से जन्म लेता है, प्रजा को अनुभव जन्म देता है।

अहित-परिहरण व हित-ग्रहण, इसी से ही जन्म लेता सदाचरण।।

अनुभव से रहित यथा बालक, अग्नि स्पर्श का करे प्रयास।

मना करने से भी नहीं मानता, ज्वलन अनुभव से दूर रहता/(भागता)।।

सुनने पढ़ने से (या) देखने से, अनुभव होता है भजनीय से।

अनुभव से सही ज्ञान हो जाता, सुनना आदि की नहीं अनिवार्यता।।
यथा अन्ध-बधिर का मिष्टान्न ज्ञान, ध्यानस्थ मुनि का आध्यात्म ज्ञान।
स्वप्न दृष्टा का यथा स्वप्न का ज्ञान, अनुभव से सुख-दुःख का ज्ञान।।
अनुभव होता अधिकांश का ज्ञान, अनुभव हीन कोरा उथला ज्ञान।
जानकारी (विज्ञापन) मात्र को ही ज्ञान मानते, स्मरण ज्ञान को अनुभव मानते।।
(यथा) अमूर्तिक आकाश को नीला मानते, गोलाकार रूप से उसे देखते।
दूरस्थ वायुयान को छोटा देखते, वायुयान के शब्द को पीछे सुनते।।
सामान्य ज्ञान रहित अधिक होते, नैतिक सदाचार रहित होते।
कर्त्तव्यशील सदुपयोगी न होते, दयादानशील से रहित होते।।
स्व-भाव संस्कृति को भी नहीं जानते, हित मित प्रिय भी नहीं बोलते।
सदुपयोग उपलब्धि का नहीं करते, अयोग्य भाव व्यवहार करते।।
रूढ़ि परम्परा में बहते जाते, लोकानुगतिक से काम करते।
संशय विभ्रम से सहित होते, प्रज्ञा युक्त श्रद्धा से रहित होते।।
संकीर्ण कट्टर स्वार्थी मोही भी होते, ईर्ष्या तृष्णा माया से सहित होते।
दीन हीन अहंकार सहित होते, मन्यमाना स्वयं को ही श्रेष्ठ मानते।।
दूसरों से अच्छा व्यवहार चाहते, स्वयं न अच्छा व्यवहार करते।
दूसरे अच्छा बने यह कहते/(चाहते), स्वयं सच्चा-अच्छा नहीं बनते।।
दूसरों की छोटी भी कमी देखते, स्वयं के दोषों को नहीं देखते।
परोपदेशी तो खूब बनते, स्वयं को उपदेश कभी न देते।।
स्व-पर उपकारी कम ही होते, आध्यात्मिक साधक विरले होते।
सत्य समता सहित स्वल्प ही होते, आध्यात्मिक अनुभवी दुर्लभ होते।।
पुस्तकीय ज्ञान मेरा मानते लोक, मेरे अनुभव से होते वंचित।
जिससे अनेक रोग कष्ट भोगते, उसके अनन्तर कोई-कोई मानते।।
अनुभव दुर्लभता से शिक्षा भी मिली, अनुभव प्राप्ति हेतु प्रेरणा मिली।
अनुभव प्राप्ति हेतु करूँ प्रयास, आत्मिक अनुभव को नमाऊँ शीश।।
अनुभव प्राप्त करे हर मानव, इसी हेतु रचना हुई ये काव्य।
स्व-पर हित हो मेरी कामना, कनकनन्दी करे शुभ भावना।।

परसाद 8.3.2013, रात्रि 12:40

अनन्त बार कृतकार्य मेरे लिए अकरणीय
एक बार भी अकृत कार्य करणीय
(पंच परिवर्तन का चिन्तन तथा प्राप्त वैराग्य)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : छोटी-छोटी गैया....., यमुना किनारे....., आत्मशक्ति से.....)

द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव में, अनन्त परिवर्तन किया हैं मैंने।
जन्म मरण भी अनन्त किया, तो भी स्वयं को कभी न पाया।।
विश्व के हर जड़ वस्तु को खाया, तथा पचाया तथा ही त्यागा।
ऐसा अनन्त बार भी किया हैं मैंने, तथापि सन्तोष/(स्व-सुख) पाया न मैंने।।
हर क्षेत्र में जन्म लिया है मैंने, तथाहि मरण भी किया है मैंने।
कोई क्षेत्र न विश्व का छोड़ा, तथापि स्वक्षेत्र को कभी न पाया।।
भूत के अनन्त समय हुए हैं, हर समय में जन्म-मरा है।
स्व-समय को कभी न पाया है, पर समय में रमण किया है।।
निगोद से देव तक बना हूँ, चतुर्गति में जन्म लिया हूँ।
चौरासी लाख योनि गहा हूँ, भवातीतगति नहीं पाया हूँ।।
भाव भी विभिन्न किया है मैंने, असंख्य लोक प्रमाण भेद में।
क्रोध मान माया लोभ मोह में, स्वभाव भाव न किया है मैंने।।
ऐसे परिवर्तन किया हूँ अनन्त, पंच परिवर्तन अनन्तानन्त।
परिवर्तन न किया मैं स्वयं को, शुद्ध भावमय स्वयं के भाव को।।
हर जीव को मारा व खाया, ऐसा ही मेरा अन्य से हुआ।
अन्य से सम्बन्ध हुए अनन्त, माता-पिता भाई पुत्री व पुत्र।।
पति-पत्नी तथा शत्रु व मित्र, समधी जमाता सास ससुर।
दास व प्रभु शोषक-शोषित, शिकार-शिकारी आदि विलोम।।
तथापि स्वयं को जाना न माना, स्व-उपकार हेतु कुछ न किना।
तन मन धन विषय भोग में, अनन्त भव गमाया मैंने।।
यह सब उच्छिष्ठ वमन मलवत्, यह सब मेरा नहीं है किंचित्।

स्वगुण धर्म ही मेरा वैभव, सच्चिदानन्दमय मेरा स्वभाव।।
उसी हेतु ही ज्ञान अध्ययन, तप त्याग व मौन साधन।
व्रत नियम मनन चिन्तन, 'कनकनन्दी' का सम्पूर्ण ध्यान।।

परसाद 16.3.2013, रात्रि 9:23

साधु भौतिक निर्माण नहीं, स्व-निर्माण करते

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : रघुपति राघव....., शायद मेरी.....)

अनेक भक्त भी मुझे कहते, भौतिक निर्माण कार्य निमित्ते।
उनके सम्बोधन हेतु व, आत्म-सम्बोधन हेतु रची यह।।
भौतिक निर्माण साधु न करते, परिग्रह हिंसा पाप से बचते।
निर्वाण हेतु निर्माण करते, रत्नत्रय भी साधना करते।।
गृहस्थ योग्य कार्य जो होते, नवकोटी से त्याग वे करते।
ख्याति पूजा लाभ न चाहते, सत्य समता की साधना करते।।
भौतिक निर्माण से बहु पाप होते, संकल्प-विकल्प-संक्लेश होते।
षट्काय जीवों की हिंसा होती, संकल्पादि भाव हिंसा होती।।
भूमि खनन व ईंट निर्माण से, पत्थर सीमेंट धातु लकड़ी से।
असंख्य त्रस-स्थावर मरते, पानी प्रयोग से असंख्य मरते।।
सामग्री परिवहन के द्वारा, रंग-रोगन फर्नीचर द्वारा।
हिंसा के साथ प्रदूषण होते, खान खूदते व जंगल काटते।।
याचना चन्दा चिट्ठा भी होते, राग-द्वेष व कलह होते।
धनजनमान की माँग होती, विषमता समस्या की बाढ़ भी आती।।
अहंकार ममकार मोह भी होता, जिससे पाप बन्ध ही होता।
इसे त्याग हेतु साधु तो बनते, साधु बनकर पुनः क्यों/(न) करते?।।
गृहस्थ भी जब निर्माण करता, उसे भी पाप बन्धन होता।
आरम्भ परिग्रह त्याग न होने से, गृहस्थ अवस्था में मोक्ष न होता।।
मन्दिर धर्मशाला गृहस्थ बनाता, पाप कम बहुपुण्य कमाता।

गुणस्थान योग्य कार्य करता, दानपूजा सेवा कर्त्तव्य करता।।
ध्यान अध्ययन मुनि करते, ज्ञान दान से प्रभावना करते।
स्व-पर विश्व कल्याण करते, 'कनकनन्दी' को यह सब भाते।।

परसाद 14.3.2013, रात्रि 9:10

स्व के अतिरिक्त अन्य में मेरी अरुचि क्यों?

(मेरी विरक्ति एवं निस्पृहता के बाह्य कारण)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : आत्मशक्ति से....., सायोनारा.....)
इस संकीर्ण मानव में, इस विषय समाज में।
इस भौतिकवादी युग में, समता न पाता/(देखता) हूँ मैं।।
भेद-भाव विभांव में, यह क्षुद्रता लक्ष्य में।
संक्लेशित-विकल्प में, शान्ति न देखता मैं।।
अस्त-व्यस्त जीवन में, संत्रस्तमय भाव में।
स्वार्थ भरा है उद्देश्य में, धैर्य न देखता मैं।।
ईर्ष्या-घृणा की ज्वाला में, राग-द्वेष के बन्धन में।
मोह-माया के अन्धेरे में, आजादी न देखता मैं।।
मत-भेद के जहर में, वाद-विवाद के कहर में।
जाति-मद के गह्वर में, उदार न देखता मैं।।
परम्परा के चक्कर में, अन्ध श्रद्धा के विकार में।
अज्ञान महातम में, अध्यात्म न पाता हूँ मैं।।
धार्मिकों की अधार्मिकता में, साक्षरों के राक्षसता में।
धनिकों के धनमद में, सत्य-शिव न पाता हूँ मैं।।
अतएव न लगता अच्छा, कहाँ भी न दिखता सच्चा।
किसी में भी न लगती रुचि, हर क्षेत्र से मेरी विरक्ति।।

मुझे स्वयं में ही अच्छा लगे, सत्य समता में मन लगे।
ध्यान अध्ययन प्यारा लगे, मौन एकान्त में भाव लगे।।
सत्य शिव सुन्दर बनूँ मैं, चिदानन्दमय रहूँ मैं।
निस्पृही विरक्त बनूँ मैं, 'कनक' स्वयं में रहूँ मैं।।

परसाद 14.3.2013, रात्रि 10:58

''मेरी भावी महान् योजनायें''

(मैं होना चाहता हूँ : मेरी भावना एवं साधना)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : आत्मशक्ति से ओतप्रोत....., शायद मेरी.....)

आगे से आगे मैं जाना चाहता हूँ...अस्थिरता से स्थिर होना चाहता हूँ।
समिति से परे मैं गुप्ति चाहता हूँ...शुभ से परे मैं शुद्ध चाहता हूँ।।ध्रु.।।
कल्पना परे निर्विकल्प चाहता हूँ...विचार परे निर्विचार चाहता हूँ।
ध्यान से परे मैं ध्येय चाहता हूँ...ज्ञेय से परे मैं ज्ञान चाहता हूँ।।
व्रत से परे निर्विकल्प चाहता हूँ...पुण्य से परे पावन चाहता हूँ।
व्यवहार द्वारा निश्चय चाहता हूँ...अभ्युदय परे मोक्ष चाहता हूँ।। (1)
प्रिय से परे श्रेय चाहता हूँ...बुद्धि से परे मैं प्रज्ञा चाहता हूँ।
स्मृति से परे अनुभूति चाहता हूँ...प्रसिद्धि परे मैं सिद्धि चाहता हूँ।।
नैतिक परे आध्यात्मिक चाहता हूँ...भौतिक परे अमूर्तिक चाहता हूँ।
प्रतीक परे साक्षात् चाहता हूँ...अनेकता में एकता चाहता हूँ।। (2)
भेद-भाव परे वीतराग चाहता हूँ...पंथ-मत परे सत्य तथ्य चाहता हूँ।
रूढ़ि परम्परा से परे चाहता हूँ...परम निर्मल भाव चाहता हूँ।।
इसी भव में यथायोग्य चाहता हूँ...शक्ति अनुसार पूर्ण चाहता हूँ।
कल नहीं आज अभी चाहता हूँ...वर्तमान में सभी पाना चाहता हूँ।। (3)
भक्ति से भगवान् होना चाहता हूँ...साधन से परे साध्य चाहता हूँ।

दान से परे मैं त्याग चाहता हूँ...शमन से परे साम्य चाहता हूँ।।
सीमातीत असीम होना चाहता हूँ...अनन्त अविनाशी होना चाहता हूँ।
धन जन मान परे होना चाहता हूँ...निस्पृह वीतरागी होना चाहता हूँ।। (4)
इसी हेतु द्रव्य क्षेत्र काल चाहता हूँ...एकान्त मौन शान्त भाव चाहता हूँ।
आकर्षण विकर्षण परे चाहता हूँ...प्रतीक्षा अपेक्षा नहीं चाहता हूँ।।
भावना के अनुसार फल चाहता हूँ...सत्य समता व शान्ति चाहता हूँ।
ध्यान अध्ययन इसी हेतु करता हूँ...'कनक' निजरूप होना चाहता हूँ।। (5)
परसाद 15.3.2013, प्रातःकाल 9:52 तथा 12:00

''मेरा ही मैं कर्त्ता-धर्त्ता-हर्त्ता''

(स्वावलम्बन एवं स्वानुशासी की भावना)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : कसमें वादे....., आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)
मैं ही मेरा परम बन्धु हूँ...और शत्रु भी हूँ मेरा।
मैं ही मेरा कर्त्ता भोक्ता हूँ...तथा ही दुःख हर्त्ता।।ध्रु.।।
मेरे अशुभ शुभ शुद्ध का...मैं हूँ कर्त्ता व भोक्ता।
अशुभ भाव से पाप उपजे...सांसारिक दुःख के कर्त्ता।।
शुभ भाव से पुण्य बन्ध होता...सांसारिक सुख के कर्त्ता।
शुद्ध भाव से बन्ध मुक्त होता...आत्मिक सुख का कर्त्ता।। (1)
इन्हीं सभी का भोक्ता भी होता...तथा भी हूँ बन्धन हर्त्ता।
द्रव्य क्षेत्र काल अन्य जीव आदि...केवल निमित्त कर्त्ता।।
अशुभ भाव जब मैं करता हूँ...बनूँ मैं स्वयं का ही शत्रु।
द्रव्य क्षेत्र आदि भले निमित्त होते...न होते मेरे व शत्रु।। (2)
क्रोध मान माया लोभ काम मोह...मेरे हैं परम शत्रु।
इनसे जब मैं परास्त हो जाता...हो जाता स्वयं का/(ही) मैं शत्रु।।
इन्हें जब मैं नाशन हेतु...करता हूँ तीव्र प्रयास।

तब मैं स्वयं का मित्र बनता हूँ...यह है शुभ प्रयास।। (3)

जब इन्हें मैं नाश कर दूँगा...बनूँगा परम मित्र।

यह ही मेरा शुद्ध भाव है...जो सत्य शिव स्वरूप।।

इसलिये मैं स्वावलम्बी हूँ...स्वतंत्र व स्वानुशासी।

सुख-दुःख हानि-लाभ का कर्त्ता...'कनक' निजानुशासी।। (4)

परसाद 16.3.2013, मध्याह्न 2:53

मान से उत्पन्न होती है दिखावा एवं दिखावे की इच्छा

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : चौपाई, आत्मशक्ति से....., रघुपति राघव.....)

मान के विश्वरूप को जानो, अंतरंग-बहिरंग रूप पहंचानो।

अंतरंग में है दीन-अहं भाव, बहिरंग में है यश-दिखावा भाव।।

स्वयं का सच्चा रूप न जानना, आत्मविश्वास संयम न होना।

भौतिक प्राप्ति को अपना मानना, मोह व मान से सहित होना।।

भौतिकता से जो अधिक होते, उनसे स्वयं को दीन/(छोटा) मानते।

दीन से भी अहंकार उपजता, इसी से दिखावा का भाव होता।।

इसी से अष्टमद उपजते, जाति कुल धन ज्ञानादि होते।

तप त्याग ऐश्वर्य शरीर होते, आज्ञा आयु सत्तादि होते।।

इसी से फैशन दिखावा करते, बढ़-चढ़कर बातें करते।

शक्ति से अधिक खर्च करते, योग्यता बिना डींग हाँकते।।

कुपमण्डूक सम भाव रखते, गपोढ़शंख सम वादा करते।

मयूर सम दिखावा करते, रिक्त चना सम शब्द करते।।

रहन-सहन में व खाना-पीना में, धर्म-कर्म व दान-पुण्य में।

जन्म-मरण विवाह पर्व में, ढोंग पाखण्ड करते सबमें।।

समय शक्ति का अपव्यय करते, दिखावा हेतु खर्च करते।

रिक्त स्थान को भरते रहते, अहं भाव को पुष्ट करते।।

इसी से विकास अवरुद्ध होता, सच्चा सम्मान भी नहीं मिलता।
संक्लेश उच्चाट मन में होता, नीचगोत्र का बन्ध भी होता।।
सरल सहज जीवन न होता, यश के लिए चिन्तित रहते।
प्रगति शान्ति निद्रा खोते, जोकर जैसे व्यवहार करते।।
मान की मृगमरीचिका त्यागो, नम्र सरल-सहज बनो।
जिनसे शान्ति समृद्धि होगी, काव्य रची अतः 'कनकनन्दी'।।

परसाद 25.3.2013, रात्रि 11:58

आचरण व अनुभव बिना पुस्तकीय ज्ञान से हानि

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : रघुपति राघव....., सायोनारा.....)

आचरण बिना पुस्तकीय/(रटन्त) ज्ञान से। लक्ष्य न प्राप्त होता केवल चित्र (नक्सा) से।।
भोजन पाचन बिना शक्ति/(ऊर्जा) न मिलती। अजीर्ण (व) रोग होते, शक्ति भी घटती।।
तथाहि पुस्तकीय ज्ञान से होता है। पाचन बिना वह अहित करता है।।
अंहंकार ईर्ष्या घृणा उत्पन्न होते हैं। संकीर्ण अनुदार भाव भी होते हैं।।
भोजन शब्द से न भूख मिटती है। ग्रंथज्ञान से न भ्रान्ति मिटती है।।
भगवान् बोलने से न अनुभव होता है। अनुभव से ही यह संभव होता है।।
तोता रटन्त से न अनुभव होता है। टेप रेकार्ड को न ज्ञान होता है।।
केवल दर्पण को न ज्ञान होता है। देखने वालों को ही ज्ञान होता है।।
पुस्तक ज्ञान तो साधन मात्र है। दर्पण यथा साधन मात्र है।।
साधन से साध्य प्राप्त करणीय। पुस्तक केवल नहीं है रटनीय।।
शब्द से भी अर्थ ज्ञान करणीय। अर्थ ज्ञान से भी भाव करणीय।।
भाव सहित भी सदा चरणीय। 'कनकनन्दी' को यह माननीय।।

परसाद 26.3.2013, प्रातः 7:27

हमारे गुरुवर जग से निराले

-आर्यिका सुवत्सलमती

(राग : ऊँचे-ऊँचे शिखरों वाला.....)

परम उच्च भावों वाले हैं कनकनन्दी जी गुरुवर।
गुरुवर हमारे ये जग से निराले2।।ध्रुव।। परम उच्च...

बालकवत् है इनकी चर्या, मन से है निष्कलंक भैया।
भोले सरल स्वभावी है, ये गुरुवर हमारे।।1।। परम उच्च...

व्यर्थ प्रपंचों में नहीं पड़ते, सतत चिन्तन/(ध्यान) में निमग्न रहते।
आध्यात्म प्रेमी योगी है, ये गुरुवर हमारे।।2।। परम उच्च...

अहंकार इन्हें छू नहीं पाता, ख्याति पूजा लाभ इन्हें नहीं भाता।
मौन एकान्त प्रेमी है, ये गुरुवर हमारे।।3।। परम उच्च...

आत्म स्वभाव में लीन रहते, विभाव भावों में माध्यस्थ रहते।
सत्य साम्य सुखामृत पीवे रे, ये गुरुवर हमारे।।4।। परम उच्च...

गुण-दोषों की समीक्षा करते, खोटे भावों से बचके रहते।
अनासक्त सूरीश्वर/(यतीश्वर) है, ये गुरुवर हमारे।।5।। परम उच्च...

साधक का गुण अनुमोदन/(नित निरीक्षण) करते, उपगूहन व स्थितिकरण करते।
वात्सल्य भाव से लबालब है, ये गुरुवर हमारे।।6।। परम उच्च...

परसाद 22.2.2013, रात्रि 8:30

मेरी प्रतिज्ञा (ससंघ के नियम)

आचार्य कनकनन्दी की प्रतिज्ञा एवं साधना

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : तेरे प्यार का आसरा.....)

एकान्त मौन में मैं रहना चाहता हूँ...
स्वात्मा की साधना सदा चाहता हूँ...

संकल्प-विकल्पों से दूर रहता हूँ...
राग-द्वेष-मोह को मैं दूर करता हूँ...(1)...
त्यागे हुए विषयों को नहीं चाहता हूँ...
गृहस्थों के विषयों से दूर रहता हूँ.../
(गृहस्थावस्था की चर्चा नहीं करता हूँ...)
तन-मन-वचन से दूर रहता हूँ...
कृत-कारित-अनुमत से दूर रहता हूँ...(2)...
धन-जन-मान व ख्याति-पूजा-लाभ से...
सकीर्ण पंथ-मत-जाति व भाषा से...
तेरा-मेरा भेदभाव घृणा-ईर्ष्या से...
दूर ही रहता हूँ स्वार्थ व लोभ से...(3)...
दिखावा आडम्बर व प्रतिस्पर्द्धा से...
निन्दा-चुगली व वाद-विवादों से...
दूसरों के अनादर-अहित भावों से...
दूर ही रहता हूँ फूट व लूट से...(4)...
चन्दा-चिट्ठा-याचना संग्रह वृत्ति से...
भौतिक निर्माण व लन्द-फन्दों से...
दबाव-प्रलोभन-ढोंग-पाखण्डों से...
'कनक' दूर है अनात्म कामों से...(5)...
साहित्य प्रकाशन व संगोष्ठी-शिविर...
देश-विदेशों में धर्म के प्रचार...
शिष्य-भक्तों द्वारा स्वेच्छा से होते हैं...
मुझसे आशीर्वाद-ज्ञान वे लेते हैं...(6)...
साधु (1981) बनते ही नियम लिया हूँ...
गृह को त्यागकर मुनित्व पाया हूँ...
आध्यात्म साधना में आगे ही बढ़ूँगा...
आध्यात्म विकास/(अनुभव/विशुद्धि) सतत करूँगा...(7)...

परसाद 21.3.2013, मध्याह्न 12:17

''मेरा दीर्घ एकान्त-मौन से प्राप्त लाभ''

(एकान्त व मौन सम्बन्धी मेरा अनुभव)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : तेरे प्यार का आसरा.....)

एकान्त मौन में मैं रहता आया हूँ, इसीसे लाभान्वित होता आया हूँ।
इसीसे मानसिक शान्ति मिलती है, मानसिक एकाग्रता खूब बढ़ती है।।ध्रु.।।

प्राज्ञा व भावनायें विशुद्ध होती, स्मरण शक्ति में तीव्रता आती।
पढ़ा हुआ सुना हुआ नहीं भूलता, दुरूपयोग समय का मेरा न होता।।
भाषा समिति का पालन होता, अति बोलना दोष नहीं लगता।
शब्द प्रदूषण भी नहीं बनता, तन-मन-बल भी नहीं घटता।।

कलह विसंवाद भी नहीं होते, राग-द्वेष संक्लेश भी नहीं होते।
जन सम्पर्क से भी दूर रहता, आकर्षण-विकर्षण से बच जाता।।
ध्यान-अध्ययन भी खूब करता, शोध-बोध व खोज करता।
अध्यापन प्रशिक्षण बहु करता, साहित्य लेखन मेरा बहुत होता।।

ज्ञानविनय से ज्ञान बढ़ता, ज्ञान का प्रचार भी अधिक होता।
गरिमा शालीनता की वृद्धि भी होती, आध्यात्मिक प्रगति भी अधिक होती।।
सत्यव्रत व धर्म का पालन होता, दीन-हीन-याचना से बच भी जाता।
त्यागे हुये विषयों की चर्चा न करता, परनिन्दा चुगली से मैं बच जाता।।

गृहस्थावस्था की चर्चा न करता, संकल्प विकल्प से मैं बच जाता।
घर गृहस्थी की चर्चा नहीं करता, गर्हित सावद्य भी नहीं बोलता।।
अप्रिय कठोर से भी मैं बच जाता, हिताहित विवेक भी प्रगट होता।
वचन में भी प्रामाणिकता आती, 'कनकनन्दी' की अनुभूति बढ़ती।।

परसाद 1.4.2013, अपराह्न 5:35

स्व-भक्त-शिष्यों के लिए मार्गदर्शन एवं शुभकामनाएँ

– आचार्य कनकनन्दी

विषय – आचार्य कनकनन्दी ससंध के नियम (निस्पृह आध्यात्मिक साधना से जैन धर्म का विश्वस्तर पर प्रचार-प्रसार)

मेरा यथायोग्य प्रतिनमोऽस्तु, समाधिरस्तु आशीर्वाद, शुभाशीर्वाद।

आप लोगों की मेरे प्रति जो भक्ति भावना, सेवाभावना, कृतज्ञता है उसके लिए आप लोगों का स्वागत तथा शुभकामनाएँ। इन भक्ति भावना आदि से प्रेरित होकर आप लोग मेरे लिए बहुत कुछ करना चाहते हो, मेरा प्रचार-प्रसार-व्यवस्था-आदर-बहुमान करना चाहते हो, इसके लिए वसतिका (आश्रम) बनाना, ग्रन्थ प्रकाशन, लेख, कविता-पूजा-आरती-लेखन तथा प्रकाशन, सी.डी. निर्माण, प्रवचन, चर्चा आदि जो कुछ करना चाहते हो यह सब आप लोगों की स्वैच्छिक गुरुभक्ति के कारण है। यह सब कार्य मेरे निम्नोक्त नियम, भाव-व्यवहार-उद्देश्य, स्वास्थ्य, प्रतिज्ञा आदि को लक्ष्य में रखकर ही करना जिससे मुझे किसी भी प्रकार दोष न लगे और आप लोगों की भावना-भक्ति-योजना भी सफल बने। आप लोगों को तो इस सम्बन्धी बहुत कुछ मालूम है, फोन आदि से बताया हूँ, पुस्तकों में, केलेण्डर, फोल्डर आदि में बहुत छपे हैं। कुछ तो मेरे बाल्यकाल के कुछ ब्रह्मचारी-क्षुल्लक-साधु-उपाध्याय-आचार्य अवस्था के नियम हैं, और कुछ नियम अभी के हैं। इन नियमों के कारण भी देश-विदशों के लोग स्वेच्छा से तन-मन-धन-समय-साधन से सहयोग करके भारत से लेकर विदेशों में अनेक देशों में धर्म प्रचार का काम कर रहे हैं। अतएव इन सबको नव कोटि से ध्यान में रखकर ही आप लोग मेरे लिए काम करना। संक्षिप्ततः मेरे तथा संघ के नियम निम्न में लिख रहा हूँ – विस्तार से पुस्तक-केलेण्डर-फोल्डरों से जान लेना।

(1. मेरी आध्यात्मिक यात्रा 2. संघ के नियम लेख के अनुसार बोलना, करना आदि।)

1. संकीर्ण पन्थ-मत-जाति-भाषा -राष्ट्र-पूजा-पाठ से ऊपर उठ कर उदार-व्यापक-वैश्विक-वैज्ञानिक दृष्टि से नवकोटि से काम करना। जैन धर्म को वैज्ञानिक-उदारवादी दृष्टि से विश्वस्तर पर प्रचार-प्रसार करना।

2. चन्दा-चिट्ठा-याचना-दबाव-प्रलोभन-आगम-लोकविरोध काम नवकोटि से नहीं करना। स्वैच्छिक सहयोग-दान से प्रभावना करना।

3. गृहस्थ सम्बन्धी कोई भी कार्य नहीं करना, केवल हितोपदेश, मार्गदर्शन योग्य परिस्थिति में योग्य व्यक्तियों को ही देना।

4. जन्म जयन्ती, दीक्षा जयन्ती आदि नहीं मनाना। ख्याति , पूजा, लाभ, प्रतिष्ठा, प्रसिद्धि, सामाजिक कार्य एवं लन्द-फन्द से नव-कोटि से दूर रहना। केवल आत्मसाधना तथा धर्म एवं गुरुओं का प्रचार करना।

5. गुरुओं द्वारा प्रदत्त मेरी उपाधियों का भी प्रयोग नहीं करना, केवल उन गुरुओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन के लिए आरती, लेख आदि में वर्णन करना। इसी हेतु अनेक कविता, आरती, लेख केलेण्डर छपे हैं और छप रहे हैं। "अनुभव गीतांजली" धारा-18 प्राय: 150 पेज की है, स्वगुरुओं के फोटो-विवरण सहित बनी है।

6. किसी भी पन्थ-मत-जाति-भाषा-राष्ट्र-साधु-गृहस्थों की निन्दा नहीं करना। मैत्री, प्रमोद, करुणा, माध्यस्थभाव से व्यवहार करना। हर भाव-व्यवहार-काम "जैन एकता एवं विश्वशान्ति" के लिए करना।

7. पूर्व गृहस्थ अवस्था के बारे में नव-कोटि से कुछ भी नहीं बोलना न लिखना। दीक्षा के बाद से वर्णन कर सकते हो। पूर्व के लेख-कविता आदि में जो गृहस्थावस्था के बारे में है उसे प्रयोग नहीं करना। संशोधन करके ही प्रयोग करना

8. अभी जो देश-विदेशों में काम हो रहा है इसका श्रेय भक्त-शिष्य-सहयोगी को देना, स्वयं को नहीं देना; केवल आशीर्वाद, मार्गदर्शन आदि करना, कहना, लिखाना आदि। इसे गुरुओं का शुभाशीर्वाद-अवदान मानना।

इन सब दृष्टिकोण से हर काम करना। कोई ग्रन्थ-लेख-कविता आदि आप लोग मेरे सम्बन्ध में लिखते हो तो उसे मेरे पास भेजकर चैक करवा लेना जिससे मुझे कोई दोष न लगे। अभी तो मेरे देश-विदेशों के वैज्ञानिक-प्रोफेसर्स

शिष्य भी मुझसे संशोधन करवा कर प्रकाशन करते हैं, मेरे सुझाव मार्गदर्शन से ही काम करते हैं,जिससे उन्हें भी सफलता मिलती है, मुझे दोष नहीं लगता है, यह उनकी नम्रता-महानता-मेरे प्रति भक्ति है। ऐसा ही आप लोग करते हुए यशस्वी, आध्यात्मिक विकास, सुख-शान्ति-स्वास्थ्य को प्राप्त करो, ऐसी मेरी मंगल शुभकामनाओं के साथ-

आपके मंगलकांक्षी गुरु

- आचार्य कनकनन्दी

परसाद, उदयपुर (राज.) दि,-14/04/2013

सूचना : इसकी प्रतियाँ साधु-साध्वी तथा भक्त शिष्यों के लिये प्रेषित।

आचार्य श्री कनकनन्दी की आध्यात्मिक यात्रा व गुरू

ब्रह्मचर्य (1976), क्षुल्लक (1978), साधु(1981), उपाध्याय (1982), आचार्य पदवी प्रदाता (1996) - आचार्य कुन्थुसागर जी गुरुदेव (शिक्षा-दीक्षा दाता)(सान्निध्य 18 वर्ष)

मार्ग दर्शक-प्रोत्साहक-शिक्षादाता-आचार्य विमलसागरजी, गुरुदेव, आचार्य विद्यानन्दजी, आचार्य भरतसागर जी।(सान्निध्य 6-7 वर्ष)

मुनिदीक्षा-(1981)श्रवणबेलगोला-सहस्राब्दी महोत्सव में आचार्य विमलसागर जी, आचार्य विद्यानन्दजी आदि प्रायः 200 साधु-साध्वी तथा लाखों श्रद्धालुओं के मध्य में।

सिद्धान्तचक्रवर्ती- (1985) आचार्य देशभूषण जी एवं आचार्य कुन्थुसागर जी द्वारा।

आचार्य-पद (1996) - पदवी प्रदाता आचार्य कुन्थुसागर जी तथा संस्कार दाता आचार्य अभिनन्दन सागर जी तथा सानिध्य आचार्य पद्मनदी जी एवं प्रायः 50-60 साधु-साध्वी की उपस्थिति में।

अध्यापन - अभी तक स्व-संघ, पर संघ के प्रायः 250-300 साधु-साध्वी, उपाध्याय, आचार्य तथा लाखों विद्यार्थी, विद्वान-प्रोफेसर, वैज्ञानिकों को ज्ञानदान, देश-विदेशों के शिष्यों द्वारा देश-विदेशों में धर्म प्रचार।

(सिद्धान्त चक्रवर्ती पदवी अनुमोदक एवं सान्निध्य-1985)
(सान्निध्य अनेक बार)

आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज

देशभूषण आचार्य गुरुवर ...''सिद्धान्तचक्री'' अनुमोदक...
शिविर-प्रशिक्षणे...नियुक्ति कर्त्ता... वन्द्य चरण...

(आचार्य पदवी संस्कार कर्त्ता एवं आचार्य रत्न पदवी दाता गुरु-1996)
(सान्निध्य अनेक बार)

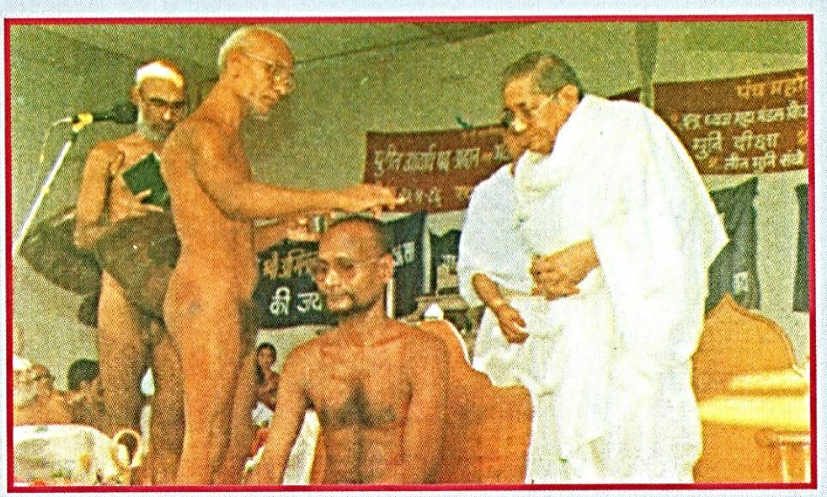

आचार्य अभिनन्दन गुरुवर... आचार्य पदवी संस्कार दातार...
आचार्य रत्न पदवी... प्रदायक मुनिवर...वन्द्य चरण...

(आद्यमार्ग दर्शक -ज्ञानदाता, मुनिदीक्षा में सान्निध्य-1981)
(मध्य-मध्य में सान्निध्य 6-7 वर्ष तक)

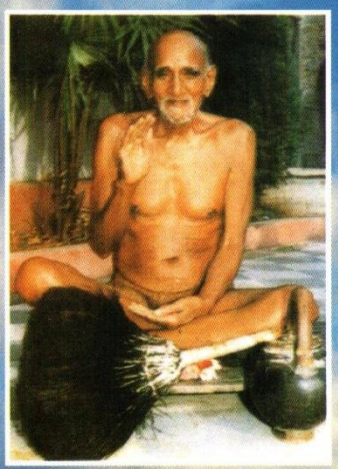

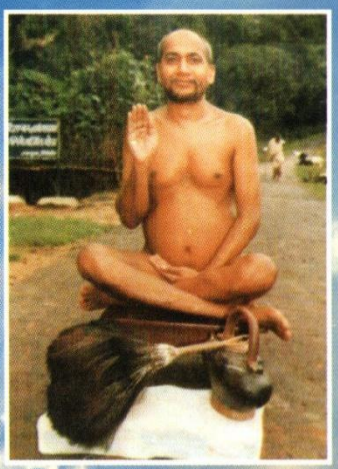

सूरी विमलसागर गुरुवर...मार्गदर्शक आद्य गुरुवर...
ज्ञान–आशीषदाता... वात्सल्य रत्नाकर...वन्द्य चरण...

सूरी भरतसागर गुरुवर... शंका निवारण ज्ञानदातार...
वात्सल्य सहयोगी...कोमल हृदयी...वन्द्य चरण...

(ज्ञानदाता-उपकरणदाता-मुनिदीक्षा में सान्निध्य - 1981)
(सान्निध्य प्रायः 9 महिना)

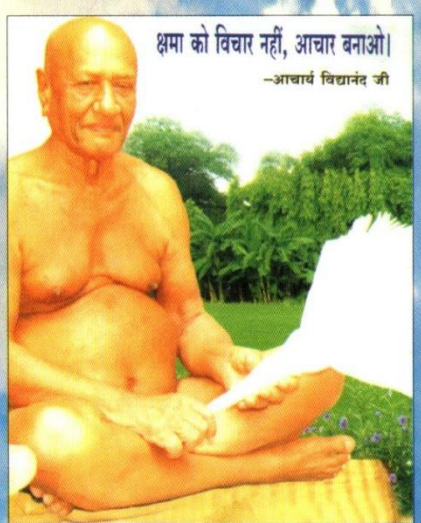

विद्यानन्द आचार्य गुरुवर... ज्ञानदाता शंका निवारक...
ज्ञान व उपकरण... दातार सूरीवर...वन्द्य चरण...